भारतीय ज्ञानपीठ काशी

ज्ञानपीठ-ग्रन्थागार

"णाणं पयासयं"

कृपया—

(१) मैले हाथोंसे पुस्तकको स्पर्श न कीजिये। जिल्दपर काग़ज़ चढ़ा लीजिये।

(२) पन्ने सम्हाल कर उलटिये। थूकका प्रयोग न कीजिये।

(३) निशानीके लिये पन्ने न मोड़िये, न कोई मोटी चीज़ रखिये। काग़ज़का टुकड़ा काफ़ी है।

(४) हाशियोंपर निशान न बनाइये, न कुछ लिखिये।

(५) खुली पुस्तक उलटकर न रखिये, न दोहरी करके पढ़िये।

(६) पुस्तकको समयपर अवश्य लौटा दीजिये।

"पुस्तकें ज्ञानजननी हैं, इनकी विनय कीजिये"

जैन
धर्मशिक्षावली
तीसरा भाग
पाठ – १
मेरी भावना



जिसने राग द्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया,
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ।
बुद्ध, वीर जिन, हरिहर, ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसीमें लीन रहो ॥ १ ॥
विषयों की आशा नहिं जिनके, साम्यभाव धन रखते हैं,
निज पर के हित साधन में जो, निशि दिन तत्पर रहते हैं ।
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख-समूह को हरते हैं ॥ २ ॥
रहे सदा सतसंग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे,
उन ही जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ।
नहीं सताऊं किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूं,
परधन वनिता* पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूं ॥ ३ ॥
अहंकार का भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ,
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्षा भाव धरूँ ।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूँ,
बने जहाँ तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूँ ॥ ४ ॥
मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों पर नित्य रहे,
दीन दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा श्रोत बहे ।
दुर्जन क्रूर कुमार्ग रतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे,
साम्य भाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे ॥ ५ ॥

---

* बालिकायें 'परनर' का पाठ पढ़ें ।

गुणीजनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे,
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे॥ ६॥
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों वर्षों तक जीऊं या, मृत्यु आज ही आ जावे।
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे॥ ७॥
हो कर सुख में मग्न न फूले, दुख में कभी न घबरावे,
पर्वत नदी-श्मशान भयानक, अटवी से नहिं भय खावे।
रहे अडोल अकंप निरन्तर, यह मन दृढ़तर बन जावे,
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में, सहन शीलता दिखलावे॥ ८॥
सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे,
बैर पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मंगल गावे।
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावें,
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुजजन्म फल सब पावें॥ ९॥
ईति भीति व्यापे नहिं जगमें, वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्म निष्ठ हो कर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे,
परम अहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्वहित किया करे॥ १०॥
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे,
अप्रिय कटुक कठोर शब्द, नहिं कोई मुख से कहा करे।

बन कर सब 'युगवीर' हृदय, से देशोन्नति रत रहा करें,
वस्तुस्वरूप विचार खुशी से, सब दुख संकट सहा करें ॥११॥

प्रश्नावली

१ मेरी भावना पढ़ने से क्या लाभ है ?

२ जगत में जीवों के प्रति कैसे भाव रखने चाहिये ?

३ इष्टवियोग और अनिष्टयोग से तुम क्या समझते हो ?

४ "सुखी रहें सब जीव जगत के" यहाँ से लेकर "फैल सर्व हित किया करे" तक पढ़ो और साधारण भावार्थ बताओ ।

५ संसार में सबसे बड़ा धर्म कौनसा है ?

६ नीचे लिखों के साथ क्या बर्ताव करना चाहिये—दीन दुखी जीव दुर्जन और गुणीजन ।

७ मेरी भावना के बनाने वाले कौन हैं ?

पाठ–२

गतियाँ

बालको ! तुम देखते हो कि संसार में जीवों की कई विशेष अवस्थायें होती हैं । कितने ही जीव मनुष्य हैं और कितने ही पशु-पक्षी कीड़े-मकौड़े आदि हैं यह–तुम नित्य प्रति देखते ही हो ।

यह भी तुमने बहुत बार किसी न किसी को कहते सुना होगा कि–यह पुरुष बड़ा धर्मात्मा है, खूब दान देता है, पुण्य

कमाता है, मर कर स्वर्ग में देव होगा; या यह पुरुष जीवों को सताता है, चोरी करता है, दगाबाज है, पापी है, इसकी दुर्गति होगी, मर कर नरक जायगा। संसार में इस जीव की सदा एक-सी दशा नहीं रहती। इसके कर्मों के अनुसार इसकी उच्च और नीच अवस्था होती है। इस प्रकार संसारी जीवों के ठहरने के स्थान को अथवा जीव की अवस्थाविशेष को गति कहते हैं।

गतियां चार होती हैं—

तिर्यंच गति, नरक गति, मनुष्य गति और देव गति।

तिर्यंच गति

एकेन्द्रिय वृक्षादि से लेकर पंचेन्द्रिय तिर्यंच (पशु तक) तिर्यंच गति में कहलाते हैं—अर्थात् एकेन्द्रिय जीव पशु-पक्षी कीड़े-मकोड़े मगर-मच्छ इत्यादि तिर्यंच हैं। जब कोई जीव मर कर इनमें जन्म लेते हैं तो उसको तिर्यंच कहते हैं। इस गति में पाँचों ही इन्द्रियों के जीव पाये जाते हैं। इस गति में भूख-प्यास, गर्मी-सर्दी, बध-बंधन, मारन-ताड़न आदि के अनेक दुख भोगने पड़ते हैं। झूठ, दगा-बाज़ी वगैरह करने से इस गति में जन्म लेना पड़ता है।

नरक गति

इस पृथ्वी के नीचे सात नरक हैं। उन नरकों में एक

समय मात्र सुख नहीं मिलता। वहां बड़ा भारी दुख है। उनमें रहने वाले जीवों को भूख-प्यास, छेदन-भेदन आदि के अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। इन नरकों में जब पशु व मनुष्य मर कर जन्म लेता है तो उसे नारकी कहते हैं। इस गति में जीव पंचेन्द्रिय सैनी ही होते हैं। इनके शरीर बड़े बेडोल और दुर्गंधमय होते हैं। जो जीव बड़े बड़े आरम्भ करते हैं, मदिरा पान करते हैं, मांस भक्षण करते हैं, अथवा तीव्र हिंसादिक बहुत ज़्यादा पाप करते हैं, वे नरक गति में जाते हैं।

मनुष्य गति

जब कोई जीव मर कर मनुष्य का शरीर धारण करे तो उसे मनुष्य कहते हैं। मनुष्य गति के जीव पंचेन्द्रिय सैनी ही होते हैं। थोड़ा आरम्भ और थोड़ा परिग्रह रखने से तथा संतोष से जीवन बिताने से मनुष्य गति में जन्म होता है।

देव गति

ऊपर लिखे तीन प्रकार के जीवों के सिवाय एक प्रकार के जीव और होते हैं; इनको अच्छे अच्छे भोग व सुखदाई पदार्थ मिलते हैं। ये रात दिन सुख में मग्न रहते हैं। जो जीव मर कर देव गति में जन्म लेता है उसको देव कहते हैं। इस गति के जीव पंचेन्द्रिय सैनी ही होते हैं। पूजा-दान,

व्रत-उपवास आदि शुभ कर्म करने से देव गति में जन्म होता है।

इन चारों गतियों में सब से उत्तम मनुष्य गति है। मनुष्य गति में ही यह जीव चारित्र धारण कर मोक्ष जा सकता है। इस लिये मनुष्य जन्म पाकर धर्म सेवन करके अपनी आत्मा का कल्याण अवश्य करना चाहिये।

प्रश्नावली

१ गति किसे कहते हैं और गति कितनी होती हैं नाम बताओ?

२ तिर्यंच गति में क्या क्या दुख देखने में आते हैं?

३ बताओ नरक कहाँ पर है और ये कितने होते हैं? यह भी बताओ कि कौन से काम करने से नरक गति मिलती है?

४ तुम इन सारी गतियों में से किस गति को अच्छा समझते हो? और क्यों?

५ नरक गति और देव गति के जीवों के कितनी कितनी इन्द्रियाँ होती हैं?

६ एक कुत्ता मर कर घोड़ा बना, बताओ वह पहिले कौनसी गति में था? अब कौनसी गति में है?

७ निम्न लिखित जीव कौनसी गति में हैं—
चिंउँटी, बन्दर, वृक्ष, तोता, लड़की, कुत्ता, बिल्ली और औरत।

पाठ – ३

वीर बालक निकलंक



आज से क़रीब हज़ार बारह सौ वर्ष पहिले की बात है । तब दक्षिण भारत में बौद्ध धर्म का बहुत प्रचार था । बौद्ध गुरु सर्वत्र अपने धर्म का प्रचार कर रहे थे, और जैन धर्म से द्वेष रखते थे । बौद्ध विद्यालयों में जैनधर्मी बालकों का शिक्षा पाना असंभव था । ऐसे कठिन समय में दो वीर बालकों को

अपने प्यारे जैनधर्म की सुध आई। उन्होंने जैनधर्म का उद्योत करने की दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली। इन बालकों का नाम अकलंक और निकलंक था। ये दोनों सगे भाई थे, और एक राजमंत्री के होनहार पुत्र थे। धर्म को प्रकाश में लाने का निश्चय करके ये अपने घर से निकल पड़े और एक बौद्ध विद्यालय में जा कर अपने को जैनी न बता कर अध्ययन करने लगे, क्योंकि उनको बौद्ध ग्रन्थ पढ़ने थे।

दोनों भाई बड़े बुद्धिशाली थे। थोड़े ही दिनों में ये दोनों सिद्धांत और न्याय शास्त्र के धुरंधर विद्वान् हो गये। नौबत यहाँ तक पहुँची कि वे अपने शिक्षकों की बात काटने लगे। उनकी युक्ति को सुन कर वे दंग रह जाते। बौद्ध गुरुओं को संशय हुआ; हों न हों ये जैन हैं। उन्होंने उनको जैन प्रमाणित करने के लिये कई उपाय किये परन्तु वे असफल रहे।

अन्त में उनकी एक युक्ति चल गई। रात्री को अचानक बड़े ज़ोर की आवाज की गई, जिसको सुन कर सब बालक चौंक पड़े और बुद्धदेव की याद करने लगे। अकलंक और निकलंक तो जैनधर्म के परमश्रद्धानी थे। उनके मुंह से अनायास "अर्हन्" शब्द निकल पड़ा। वे पकड़े गये दोनों भाई एक कोठरी में बन्द कर दिये गये।

दोनों भाइयोंने सोचा "यह बहुत बुरा हुआ दिल की दिल

ही में रह गई अब जैन धर्म का उत्कर्ष कैसे होगा ?" आखिर एक बात उनकी समझ में आ गई। वे खिड़की से कूद कर भागे। सबेरा होते होते वे बहुत दूर निकल गये। सवेरे जब दोनों को कारागृह में न पाया तो झट चारों ओर हथियार-बन्द घुड़सवारों को दौड़ा दिया गया।

अभी अकलंक और निकलंक किसी सुरक्षित स्थान पर नहीं पहुँचे थे, वे सरपट रास्ता तय कर रहे थे कि उन्हें घोड़ों की टापों का शब्द सुनाई दिया। वे ताड़ गये, हों न हों बौद्ध लोग आ रहे हैं। उन्हें अपनी रक्षा का कोई उपाय न दिखाई दिया। हठात् छोटे भाई निकलंक ने बड़े भाई से तालाब में छिप कर जान बचाने को कहा। परन्तु बड़ा भाई छोटे भाई को संकट में डालने को तैयार न था। निकलंक उनके पैरों में गिर पड़ा और बोला "भैया! अब मेरा मोह मत करो, बेशक यह आपका कर्तव्य है कि मुझे कष्ट न होने दो, किन्तु आप भूलते हैं। इससे भी बढ़ कर मेरा और आप दोनों का समान कर्तव्य है "जैन धर्म फैलाना" पर मुझमें आपके समान ज्ञान और तेज नहीं है। आप धर्मोद्योत के लिये जाइये और अपने प्राणों की रक्षा कीजिये। धर्म के लिये मेरा यह नश्वर शरीर काम आये इससे बढ़ कर मेरा सौभाग्य और क्या होगा ?"

बड़े भाई ने धर्मोद्योत के लिये छोटे भाई की बात मान

ली। वे तालाब में जाकर छिप रहे। उधर निकलंक आगे बढ़े। उनका एक पथिक से साथ हो गया। देखते ही देखते हथियार बंद घुड़सवार उन पर आ धमके, और दोनों को पकड़ कर मार डाला। निकलंक धर्म के लिये शहीद हो गये।

वीर अकलंक ने मुनि होते हुए धर्म को फैलाना शुरू कर दिया। एकबार वह राजा हिमशीतल के दरबार में पहुँचे। और वहाँ बौद्धों के साथ शास्त्रार्थ किया, जिसमें अकलंकने विजय पाई और जैनधर्म का प्रभाव फैला। वहाँ के लोगों को जैन बनाया। उन्होंने राजवार्तिक आदि बहुत से जैन ग्रन्थ लिखे। ये न्यायशास्त्र के बड़े धुरन्धर विद्वान् थे।

बालको! धर्म प्रभावना के लिये प्रत्येक को अपनी शक्ति अनुसार काम करना चाहिये। परन्तु यह न भूलना कि "किसी पर अत्याचार करना धर्म नहीं है; जीव मात्र की भलाई करना और सदैव सच्चा सादा जीवन बिताना यही धर्म है।"

लड़को! तुम ऐसा धर्म कार्य करने के लिये सदा उद्यत रहो। धर्म को अपने प्राणों से भी बढ़ कर समझो। धर्म के लिये प्राण दे देना बड़ाभारी धर्म है।

जो श्रीअकलंक के समान अपना जीवन धर्म के लिये अर्पण करते हैं, वे अपने जीवन को सफल बनाते हैं।

१२ कीर्त्ति के प्राप्त करने में बहुत समय लगता है।

प्रश्नावली

१ बौद्ध धर्म के चलाने वाले कौन थे?
२ अकलंक और निकलंक को बौद्ध धर्म का अध्ययन करते समय क्या क्य कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं?
३ "अर्हन्" शब्द से तुम क्या समझते हो? बौद्ध गुरुओं ने कैसे मालूम किया कि अकलंक और निकलंक जैन थे?
४ निकलंक ने अपने प्राण क्यों तज दिये? तुम्हारी समझ में निकलंक ने अच्छा किया या बुरा?
५ धर्म और अपने प्राणों में तुम किसको बड़ा समझते हो?

पाठ – ४

जिनवाणी स्तुति

सवैया २३

(१)

वीर हिमाचल तैं निकसी, गुरु गौतम के मुख कुंड ढरी है,
मोह महाचल भेद चली जग की जड़ता तप दूर करी है।
ज्ञान पयोदधि मांहि रली, बहु भंग तरंगनिसों उछरी है,
ता शुचिशारद गंगनदी प्रति, मैं अंजुलिनिजशीस धरी है।

(२)

या जग मंदिर में अनिवार, अज्ञान, अंधेर छयो अति भारी,
श्री जिनकी धुनि दीपशिखासम जो नहिं होत प्रकाशन हारी

तो किह भांति पदारथ पाती, कहा लहते रहते अविचारी,
या विधि संत कहैं धन हैं धन हैं, जिन बैन बड़े उपकारी।
दोहा—जा बाणी के ज्ञान तैं, सूझे लोकालोक।
सो वाणी मस्तक चढ़े, नित प्रति देतहुं धोक॥

प्रश्नावली

१ जिनवाणी से तुम क्या समझते हो?
२ जिनवाणी के पढ़ने से क्या लाभ है?
३ जिनवाणी की स्तुति पढ़ो।

पाठ—५

अजीव द्रव्य (अ)

पहले भाग में तुम पढ़ चुके हो कि जिसमें चेतना अर्थात् जानने देखने की शक्ति न हो उसे अजीव कहते हैं। अजीव पांच प्रकार के होते हैं।

पुद्गलास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और काल।

पुद्गल—जिसमें स्पर्श, रस, गन्ध, और वर्ण पाये जावें उसे पुद्गल कहते हैं। ये चारों गुण प्रत्येक पुद्गल में एक साथ रहते हैं। जैसे पके आम में कोमल स्पर्श है, मीठा रस है, अच्छी गंध है और पीला वर्ण है।

यह गुण पुद्गल के सिवाय और किसी द्रव्य में नहीं पाये जाते।

पुद्गल के गुण

स्पर्श—उसे कहते हैं जो स्पर्शन इन्द्रिय या छूने से जाना जाय। स्पर्श आठ प्रकार का होता है—ठंडा, गर्म, रूखा, चिकना, कड़ा, नरम, हल्का, भारी।

जैसे पानी ठंडा, आग गर्म, बालू रूखी, घी चिकना, पत्थर कड़ा, मखमल नरम, रुई हल्की और लोहा भारी होता है।

रस—उसे कहते हैं जो रसना (जिह्वा) इन्द्रिय से जाना जाय। रस पांच प्रकार का होता है—खट्टा, मीठा, कड़ुवा, चर्परा, कषायला।

जैसा नीम्बू खट्टा, पेड़ा मीठा, नीम कड़ुवा, मिर्च चरचरी और हरड़ कषायली होती है।

गंध—उसे कहते हैं जो घ्राण (नासिका) इन्द्रिय द्वारा जाना जाय। गंध दो प्रकार का है—सुगन्ध (खुशबू), दुर्गंध (बदबू)।

जैसे गुलाब के फूल में सुगन्ध और मिट्टी के तेल में दुर्गंध आती है।

वर्ण—उसे कहते हैं जो चक्षु (आँख) इन्द्रिय से जाना जाय। वर्ण पांच प्रकार का होता है—काला, पीला, नीला,

लाल, सफेत। जैसे कोयला काला, सोना पीला, मोर का पंख नीला, गेरू लाल और चाँदी सफेत होती है।

इन रंगों में से एक दूसरे के मिल जाने से और भी अनेक प्रकार के रंग बनते हैं; जैसे नीला पीला मिलाने से हरा रंग बनता है।

इस प्रकार स्पर्श आठ, रस पाँच, रूप पाँच, गंध दो, सब मिला कर पुद्गल के बीस गुण होते हैं।

पुद्गल के भेद–पुद्गल दो प्रकार का है–परमाणु और स्कंध।

परमाणु–उस छोटे से छोटे टुकड़े को कहते हैं जिसका दूसरा टुकड़ा न हो सके।

स्कंध–दो या दो से अधिक मिले हुए पुद्गलके परमाणुओं को स्कंध कहते हैं। स्कंध अनेक तरह के हैं।

प्रश्नावली

१ पुद्गल किसे कहते हैं? चार पुद्गल द्रव्यों के नाम लेकर बताओ कि पुद्गल में कितने व कौन कौन से गुण होते हैं?

२ गुलाब के फूल की सुगंध तुम कौनसी इन्द्रिय से जानते हो?

३ वर्ण कितने प्रकार के हैं? किसी वस्तु का वर्ण जानने में तुम अपनी कौनसी इन्द्रिय से काम लोगे?

४ परमाणु और स्कन्ध में क्या भेद है?

५ जिस वस्तुमें रूप और रस होते हैं उसमें स्पर्श और गंध होंगे या नहीं? यदि होंगे तो क्यों, कारण बताओ।

६ किसी ऐसी वस्तु का नाम बताओ जिसमें स्पर्श पाया जाय किन्तु रस गंध व वर्ण न पाये जायें ।

७ स्पर्श और रस के भेद भिन्न भिन्न नाम सहित बताओ ।

पाठ – ६

अजीव द्रव्य (आ)

अजीव के पाँच भेदों में से पुद्गल पहिले बता चुके हैं, शेष द्रव्यों को अब बताते हैं ।

धर्मास्तिकाय – उसे कहते हैं जो स्वयं चलते हुए जीव और पुद्गलोंको चलनेमें, उड़ानेमें उदासीन रूपसे मदद दे । जैसे जल मछली को चलने में, हवा पतंग उड़ाने में सहायक होती है । यह द्रव्य एक है और तमाम लोकाकाश में पाया जाता है, और अरूपी होने के कारण आँखों से दिखाई नहीं पड़ता ।

अधर्मास्तिकाय – उसे कहते हैं जो स्वयं ठहरते हुए जीव और पुद्गलों को उदासीन रूप से मदद दे । जैसे थके हुये मुसाफिर को पेड़ की छाया ठहरने में सहायक होती है । यह पदार्थ भी एक है और तमाम लोक में पाया जाता है । अरूपी होने के कारण आँखों से दिखलाई नहीं पड़ता ।

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय – जीव-पुद्गल को प्रेरणा

करके चलाते व ठहराते नहीं हैं। परन्तु जब वे चलते या ठहरते हैं तब उनकी मदद अवश्य करते हैं। बात यह है कि धर्मास्तिकाय न हो तो हम चल फिर नहीं सकते, और अधर्मास्तिकाय नहीं हो तो हम ठहर नहीं सकते।

(यहाँ धर्म से पुण्य और अधर्म से पाप नहीं समझना चाहिये)

आकाश—आकाश उसे कहते हैं जो सब चीजों को जगह दे अर्थात् जिसमें सब चीजें रह सकें। यह एक, अखण्ड और अनन्त द्रव्य है।

आकाश के दो भेद हैं—लोकाकाश और अलोकाकाश।

लोकाकाश—आकाश में जहाँ तक पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल और जीव ये छह द्रव्य पाये जाँय उतने आकाश को लोकाकाश कहते हैं।

अलोकाकाश—लोक के बाहर बचे हुए अनन्त आकाश को अलोकाकाश कहते हैं।

काल—जो द्रव्य की हालतों के बदलने में मदद दे उसे काल कहते हैं।

व्यवहार में पल, घड़ी, दिन, महीना, वर्ष को काल कहते हैं। यह निश्चय काल की पर्याय है। निश्चय काल कालाणु को कहते हैं जो सर्व लोक में रत्नों की राशि के समान भरे हुए हैं।

पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल और जीव ये छह द्रव्य हैं। इनमें काल को छोड़ कर पाँच द्रव्य कायवान होने से पंचास्तिकाय कहलाते हैं।

काल द्रव्य कायवान नहीं है क्यों कि उसका एक एक अणु (हिस्सा) अलग अलग है। शेष पाँच द्रव्य एक अणु से अधिक जगह घेरते हैं। इन छहों द्रव्यों में से पुद्‌गल रूपी है, शेष पाँच अरूपी हैं।

प्रश्नावली

१ धर्म द्रव्य किसे कहते हैं और उसका क्या काम है? यदि धर्म द्रव्य नहीं होता तो तुम्हारी क्या हानि होती?

२ अधर्म द्रव्य का क्या स्वरूप है? कोई दृष्टांत दे कर समझाओ कि जीवों के लिये अधर्म द्रव्य क्या और किस प्रकार कार्य करता है।

३ आकाश के कितने भेद हैं? बताओ अलोकाकाश में कौन कौन से द्रव्य पाये जाते हैं?

४ काल किसे कहते हैं? और यह कितने प्रकार का है? व्यवहार काल से तुम क्या समझते हो?

५ पंचास्तिकाय द्रव्यों के नाम बताओ और यह भी बताओ कि इनका नाम पंचास्तिकाय क्यों पड़ा?

६ रूपी अरूपी से तुम क्या समझते हो? बताओ छहों द्रव्य में से कौन कौन से द्रव्य रूपी हैं और कौन कौन से द्रव्य अरूपी हैं?

पाठ—७

प्रार्थना

मुझे है स्वामी ! उस बल की दरकार।
अड़ी खड़ी हों अमित अड़चनें, आड़ी अटल अपार।
तोभी कभी निराश निगोड़ी, फटक न पावे द्वार ॥ १ ॥
सारा ही संसार करे यदि, दुर्व्यवहार-प्रहार।
हटे न तो भी सत्य मार्ग-गत, श्रद्धा किसी प्रकार ॥ २ ॥
धन-वैभव की जिस आँधी से, अस्थिर सब संसार।
उससे भी न कभी डिग पावे, मन बन जाय पहार ॥ ३ ॥
असफलता की चोटों से नहिं, दिल में पड़े दरार।
अधिकाधिक उत्साहित होऊँ, मानूँ कभी न हार ॥ ४ ॥
दुख-दरिद्रता-कृत अतिश्रम से, तन होवे बेकार।
तो भी कभी निरुद्यम हो नहिं, बैठूँ जगदाधार ॥ ५ ॥
जिसके आगे तन-बल धन-बल, तृणवत् तुच्छ असार।
महावीर जिन ! वही मनोबल, महा महिम सुखकार ॥ ६ ॥

प्रश्नावली

१ कवि को किस बल की दरकार है ?
२ यदि आपके रास्ते में अड़चनें आजांय, तो आप क्या करेंगे ?
३ दुर्व्यवहार की दशा में भी मनुष्य को किस मार्ग पर चलना चाहिए ?
४ इस कविता के रचयिता का संक्षिप्त परिचय दो।

पाठ – ८

सच्चे देव, शास्त्र, गुरु

सच्चा देव

सच्चा देव – उसे कहते हैं जो वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी हो ।

वीतरागी – उसे कहते हैं जो किसी से राग तथा द्वेष न करता हो । उसमें नीचे लिखे अठारह दोष नहीं होते ।

दोहा – जन्म जरा तिरखा छुधा, विस्मय आरत खेद ।
रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिंता स्वेद ॥
राग द्वेष अरु मरण जुत, ये अष्टादश दोष ।
नाहिं होत अरहंत के, सो छवि लायक मोष ॥

अर्थ – अरहंत भगवान् को सच्चा देव कहते हैं । उनके जन्म, बुढ़ापा, प्यास, भूख, आश्चर्य, दुख, खेद, रोग, शोक, घमंड, मोह, भय, नींद, चिंता, पसीना, राग, द्वेष और मरण, ये अठारह दोष नहीं होते ।

सर्वज्ञ – उसे कहते हैं जो संसार में जो कुछ पहले हो चुका है, अब हो रहा है और आगे होनेवाला है, उस सब को हर समय प्रत्यक्ष जाने । सब पदार्थ और उनकी सब दशाओं को हर समय जाननेवाले को सर्वज्ञ कहते हैं ।

हितोपदेशी—उसे कहते हैं जो सब जीवों के हित का उपदेश दे।

जिस देव में सर्वज्ञपन, वीतरागीपन और हितोपदेशीपन ये तीन गुण पाये जाँय उसे सच्चा देव कहते हैं। अरहंत, तीर्थंकर, जिनेन्द्र, परमात्मा, परमेश्वर आदि उसके अनेक नाम हैं।

सच्चा शास्त्र

सच्चा शास्त्र, उसे कहते हैं जो सच्चे देव का कहा हुआ हो। जिसमें किसी प्रकार का विरोध न हो, जिसका कभी खंडन न हो सके, जो खोटे मार्ग का नाश करने वाला हो। जिसके पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने से जीवों का कल्याण हो और जो सब का हितकारक हो।

इसको जिनागम, जिनवाणी और सरस्वती भी कहते हैं।

सच्चा गुरु

सच्चा गुरु—उसे कहते हैं जो पाँचों इन्द्रियों के विषयों में से किसी की चाह न रखता हो, कोई आरम्भ न करता हो, अपने पास कोई परिग्रह न रखता हो, ज्ञान ध्यान तप में सदा लीन रहता हो और हिंसादि पांच पापों का सर्वथा त्यागी हो।

ऐसे गुरु को साधु, मुनि, यति, तपस्वी आदि भी कहते हैं।

(नोट—यहां गुरु शब्द से स्कूल तथा पाठशालाओं में पढ़ाने वाले अध्यापक तथा शिक्षक न समझना चाहिए वे केवल विद्या गुरु हैं।)

बालको! इस सच्चे देव, शास्त्र, गुरुके स्वरूप को जान कर सदा उनकी भक्ति पूजन सेवा करनी चाहिये।

रागी, द्वेषी, संसारी देवों तथा गुरुओं को कभी नहीं पूजना चाहिए और न आचरण बिगाड़ने वाले, विषय-कषाय बढ़ाने वाले खोटे शास्त्रों को ही पढ़ना चाहिये। जैन मन्दिरों में जो पद्मासन और खड्गासन जैन मूर्तियाँ होती हैं वे सच्चे देव की होती हैं। उन मूर्तियों के दर्शन से अरहंत का स्वरूप झलकता है।

प्रश्नावली

१ सच्चे देव में क्या क्या विशेष गुण होते हैं?

२ अठारह दोषों के नाम बताओ। ये किसमें नहीं पाये जाते हैं?

३ सर्वज्ञ किसे कहते हैं? अरहंत भगवान सर्वज्ञ हैं या नहीं?

४ सच्चे शास्त्र का लक्षण बताओ। सच्चे शास्त्र को और किन नामों से पुकारते हैं? जिस शास्त्र में मांस खाना व शराब पीना अच्छा बतलाया गया है, वह सच्चा शास्त्र है या नहीं?

५ सच्चे गुरु का क्या लक्षण है? सच्चे गुरु कौन हैं? स्कूल में पढ़ाने वाले शिक्षक सच्चे गुरु हैं या नहीं?

पाठ-९

श्रीमती राजुल देवी

श्रीमती राजमती या राजुलदेवी जूनागढ़ के राजा उग्रसेन की पुत्री थी। बालकपन से इनका लालन पालन बड़ी योग्यता से हुआ था। ये बड़ी सुशीला, गुणवती और रूपवती थी। इसने थोड़े समय में सब विद्यायें सीख लीं। जैनधर्म की शिक्षा भी उसे उत्तम रीति से दी गई थी।

युवती होने पर इसका सम्बन्ध शौरीपुर के यदुवंशी राजा समुद्रविजय और रानी शिवादेवी के पुत्र बाईसवें तीर्थंकर श्री नेमिप्रभु के साथ निश्चित हुआ। नेमिप्रभु उस समय भूमंडल में सब से श्रेष्ठ, बलवान, धीरवर, शान्तस्वभावी और पराक्रमी राजकुमार थे। ऐसे गुणवान् पति के प्राप्त होने की आशा से राजमती के हर्ष का ठिकाना न रहा।

दोनों ओर से व्याह की तैयारियाँ होने लगीं। नियत तिथि पर बारात धूमधाम के साथ जूनागढ़ पहुँची। उस समय राजमती अपने महल के झरोखे में बैठी हुई पति के गुणों का विचार कर बड़ी प्रसन्न हो रही थी।

जब बारात नगर में प्रवेश करने लगी तब श्री नेमिप्रभु ने मार्ग में बाड़े में घिरे और चिल्लाते हुए बहुत से पशुओं को देखा। परम दयालु भगवान् ने रथ रुकवाया। सारथी से इस

भयानक दृश्य का कारण पूछा। उत्तर में सुन कर कि बारात में आये हुए मांसाहारी राजाओं के खाने के लिये यह पशु बध किये जायेंगे, उनका हृदय तड़प उठा। भगवान् को जब यह मालुम हुवा कि उनके चचेरे भाई श्री कृष्ण ने उन्हें वैराग्य पैदा करने के लिए इन पशुओं को बंद करा दिया था, तब प्रभु विचारने लगे कि धिक्कार है ऐसे संसार को जिसमें प्राणी राजभोग में आतुर हो कष्ट उठाते हैं। यह सोच, विषय-भोगों से विरक्त हो, वे तुरन्त रथ से उतर पड़े, और वहीं पर कंकण आदि तोड़, गिरनार पर्वत पर जा, सर्व परिग्रह और वस्त्राभूषण आदि छोड़ मुनि हो गये, और आत्मध्यान में मग्न हो तपस्या करने लगे।

ज्यों ही यह खबर राजमहल में पहुँची वहाँ खलबली मच गई। सब के मूँह पर उदासी छा गई। उधर जब यह चर्चा राजमती ने सुनी, तो उसके हृदय पर दुःखोंका पहाड़ टूट पड़ा। कहाँ तो वह परम हर्ष और कहाँ यह विपत्ति का पहाड़।

राजमती को सब कुटुम्बीगण समझाने लगे। सब ने चाहा कि इसके मनसे श्री नेमिप्रभु के वियोग का दुःख भुला दिया जाय। माता ने मोह के वश हो कर अनेक प्रकार से राजुलदेवी को शिक्षा दी कि "हे पुत्री! श्री नेमिनाथ का साथ छूटने की कुछ चिंता न करो; उनके साथ तुम्हारा पाणिग्रहण तो हुआ

गिरनार पर्वत



नहीं था; उनसे भी अधिक रूपवान और गुणवान वर, तुम्हारे लिये ढूँढ़ लिया जायगा"। राजुलकुमारी ने उत्तर दिया "माताजी ऐसे बचन न कहिये।" मैं तो अंतरंग में, संबंध के समय ही अपने आपको सर्व प्रकार से श्री नेमिप्रभु को अर्पण कर चुकी हूँ; उनके सिवाय और कोई मेरा पति नहीं हो सकता। मुझे भोग सामग्रियों की कुछ अभिलाषा नहीं है। मैं भी श्री नेमिनाथ के समान गिरनार पर्वत पर जा कर अपना आत्म-कल्याण करूँगी। इस प्रकार दृढ़ निश्चय कर राजुल समस्त कुटुम्बियों से विदा माँग, संसार और शरीर का मोह छोड़, आर्यिका बन गिरनार पर्वत की गुफ़ा में परम तप करने लगी।

इधर तपश्चरण करते करते श्रीनेमिप्रभु को केवलज्ञान हो गया। वे अरहंत हो गये, और उनके ज्ञान में लोक-अलोक स्पष्ट दिखाई देने लगे। इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने भगवान् का समवशरण बनाया। सब जगह के भव्य जीव समवशरण में भगवान् का उपदेश सुनने आये। भगवान् की सभा में राजमती छह हजार आर्यिकायों की गुरानी हुई।

सर्वत्र धर्मोपदेश कर कुछ काल बाद श्री नेमिप्रभु निर्वाण पधारे। राजुल भी अपने तप के फल से स्वर्ग में जा कर इन्द्र हुई।

धन्य है श्रीमती राजुल देवी का साहस, पतिप्रेम और धर्माचरण।

प्रश्नावली

१ राजुलदेवी कौन थी और इनका विवाह किन के साथ होना निश्चित हुआ था?

२ मार्ग में पशुओं को किसने तथा क्यों बंद करा दिया था?

३ नेमिप्रभु के वैराग्य का कारण बताओ।

४ नेमिप्रभु के वैराग्य लेने के बाद राजुलदेवी ने क्या किया?

५ राजुलमती का विवाह नेमिप्रभु के साथ हुआ ही नहीं था, फिर राजुलदेवी नेमिप्रभु के साथ क्यों गिरनार पर्वत पर चली गई?

६ गिरनार पर्वत पर जा कर नेमिप्रभु तथा राजुलदेवी ने क्या किया तथा उसका क्या परिणाम हुआ।

पाठ – १०

आलोचना पाठ

बन्दों पाँचों परमगुरु, चौबीसों जिनराज।
करूँ शुद्ध आलोचना, शुद्ध करन के काज॥ १॥

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
तिनकी अब निर्वृति काज, तुम शरण लही जिनराज॥ २॥
इक वे ते चौ इन्द्री वा, मन रहित-सहित जे जीवा।
तिनकी नहिं करुणा धारी, निर्दय ह्वै घात विचारी॥ ३॥

समरंभ समारंभ, आरंभ, मन वच तन कीने प्रारंभ।
कृत कारित मोदन करिके, क्रोधादि चतुष्टय धरिके॥ ४॥
शत आठ जु इन भेदनितें, अघ कीने पर छेदनतें।
तिनकी कहुँ कौलों कहानी, तुम जानत केवल ज्ञानी॥ ५॥
विपरीत एकांत विनय के, संशय अज्ञान कुनय के।
वस होय घोर अघ कीने, बचतें नहिं जात कहीने॥ ६॥
कुगुरुन की सेवा कीनी, केवल अदया कर भीनी।
या विधि मिथ्यात बढ़ायो, चहुँगति में दोष उपायो॥ ७॥
हिंसा पुनि झूठ जू चोरी, पर वनिता सों दृग जोरी।
आरम्भ परिग्रह भीने, पन पाप जु या विधि कीने॥ ८॥
स्पर्शन रसना घ्रानन को, दृग कान विषय सेवन को।
बहु कर्म किये मन माने, कछु न्याय अन्याय न जाने॥ ९॥
फल पंच उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चित चाये।
नहीं अष्ट मूल गुन धारे, सेये कुविसन दुखकारे॥ १०
दुई वीस अभख जिन गाये, सो भी निशिदिन भुंजाये।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यों त्यों कर उदर भरायो॥ ११॥
अनंतानुबंधी सो जाने, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्याने।
संज्वलन चौकड़ी गुनिये, सब भेद जु षोड़श मुनिये॥ १२॥
परिहास अरति रति सोग, भय ग्लानि तिवेद संजोग।
पनबीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम॥ १३॥
निद्रावश शयन कराया, सुपने मधि दोष लगाया।
फिर जागि विषय-वन धायो, नानाविधि विषफल खायो॥१४॥

आहार विहार निहारा, इनमें नहिं जतन विचारा।
बिन देखे धरा उठाया, बिन शोधा भोजन खाया॥ १५॥
तब परमाद सतायो, बहु विध विकलप उपजायो।
कुछ सुधि बुधि नाहिं रही है, मिथ्या मति छाय गई है॥१६॥
मर्यादा तुम ढिग लीनी, ताहू में दोष जु कीनी।
भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञान विषै सब पइये॥ १७॥
हा! हा!! मैं दुठ अपराधी, त्रस जीवन राशि विराधी।
थावर की जतन न कीनी, उर में करुणा नहिं लीनी॥ १८॥
पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागाँ चिनाई।
बिन गाल्यो पुनि जल ढोल्यो, पंखा तैं पवन विलोल्यो॥१९॥
हा! हा! मैं अदयाचारी, बहु हरित जु काय विदारी।
या विधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनंदा॥ २०॥
हा! हा! परमाद बसाई, बिन देखे अग्नि जलाई।
ता मध्य जीव जे आये, तेहू परलोक सिधाये॥ २१॥
बींधो अन रात पिसायो, ईंधन बिन शोध जलायो।
झाड़ू ले जागाँ बुहारी, चिंटि आदिक जीव विदारी॥ २२॥
जल छान जिवानी कीनी, सोहू पुनि डारि जु दीनी।
नहिं जल थानक पहुंचाई, किरियाबिन पाप उपाई॥ २३॥
जलमल मोरिन गिरवायो, कृमि कुल बहुघात करायो।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये॥ २४॥
अन्नादिक शोध कराई, ता मध्य जीव निसराई।
तिनको नहीं जतन करायो, गरियारे धूप डरायो॥ २५॥

पुनि द्रव्य कमावन काजै, बहु आरंभ हिंसा साजै।
कीये अघ तिसनावश भारी, करुणा नहिं रंच विचारी ॥ २६ ॥
इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता।
संतति चिर काल उपाई, वाणी तें कही न जाई ॥ २७ ॥
ताको जु उदय अब आयो, नाना विधि मोह सतायो।
फल भुंजत जिय दुख पावे, वचतैं कैसे करि गावे ॥ २८ ॥
तुम जानत केवल ज्ञानी, दुख दूर करो शिव थानी।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारण विरद सही है ॥ २९ ॥
एक ग्राम पति जो होवे, सो भी दुखिया दुख खोवे।
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटो अंतरयामी ॥ ३० ॥
द्रोपदि को चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो।
अंजन से किये अकामी, दुख मेटो अंतरयामी ॥ ३१ ॥
मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपना विरद निहारो।
सब दोष रहित कर स्वामी, दुख मेटो अंतरयामी ॥ ३२ ॥
इन्द्रादिक पद नहिं चाहुँ, विषयन में नाहिं लुभाऊँ।
रागादिक दोष हरीजे, परमातम-निज पद दीजे ॥ ३३ ॥
दोहा—दोष रहित जिन देव जी, निज पद दीजे मोय।
सब जीवन को सुख बढ़े, आनन्द मंगल होय ॥ ३४ ॥
अनुभव माणिक पारखी, जौहारि आप जिनंद।
ये ही वर मोहि दीजिये, चरण शरण आनंद ॥ ३५ ॥

प्रश्नावली

१ आलोचना किसे कहते है? यह पाठ क्यों पढ़ा जाता है?

२ १०८ पाप कौन से हैं? भली प्रकार समझाओ।

३ मिथ्यात्व, मूल गुण, अभक्ष्य, व्यसन व कषाय कितने हैं? नाम भी बताओ।

४ जल छान कर जिवानी का क्या करना चाहिये?
"इत्यादिक पाप अनन्ता" यहाँ से तीन छंद पढ़ो।

६ अनाज किस समय और किस प्रकार पीसना चाहिये?

७ सीता, द्रोपदी और अंजन चोर के विषय में तुम क्या जानते हो' संक्षिप्त कहानी सुनाओ।

८ नीचे लिखे छंद पढ़ो:—
समरंभ······ । हा हा मैं······ ।
अनुभव माणिक······ । दोष रहित······ ।

पाठ – ११

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र

सम्यग्दर्शन

सच्चे देव, सच्चे गुरु, सच्चे शास्त्र, तथा दयामय धर्म का सच्चे दिल से श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन कहलाता है।

सम्यग्दर्शन धर्म रूपी पेड़ की जड़ है। जैसे जड़ के बिना पेड़ नहीं ठहरता, वैसे ही सम्यग्दर्शन के बिना सब धर्म कर्म व्यर्थ हैं; उन से कुछ अधिक लाभ नहीं होता। इसलिये आत्म कल्याण के लिये सब से पहले सम्यग्दर्शन का धारण करना जरूरी है। सम्यग्दर्शन की बड़ी महिमा है। जिस जीव को सम्यग्दर्शन हो जाता है वह मर कर उत्तम देव या मनुष्य होता है। वह मर कर स्त्री नहीं होता। वह नरक भी जाता है तो पहले नरक से नीचे नहीं जाता और कीड़ा, मकौड़ा, कुत्ता, बिल्ली वृक्षादि में जन्म नहीं लेता है।

सम्यग्ज्ञान

पदार्थ के स्वरूप को ठीक ठीक जैसा का तैसा जानना सम्यग्ज्ञान है।

सम्यग्दर्शन होने से पहले जो ज्ञान होता है वह सम्यग्ज्ञान नहीं कहलाता है, किन्तु कुज्ञान कहलाता है। परन्तु

सम्यग्दर्शन होने पर वही ज्ञान सम्यग्ज्ञान कहलाता है। सम्यक्त्व से ही आत्मज्ञान और केवलज्ञान होता है। इसलिये सम्यग्ज्ञान प्राप्त करना चाहिये। वह सम्यग्ज्ञान सच्चे शास्त्रों के पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने तथा बार-बार विचार करने से प्राप्त होता है।

सम्यग्ज्ञान की बड़ी महिमा है। ज्ञान होने पर थोड़ी सी मेहनत से जन्म-जन्म के पाप कट जाते हैं; जो अज्ञानी जीव के करोड़ों जन्मों में भी नहीं कटते।

सम्यक्चारित्र

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह इन पाँचों पापों तथा क्रोध, मान, माया, लोभ, चार कषाय आदि का त्याग करना सम्यक्चारित्र है।

सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान होने पर आत्मकल्याण के लिये सम्यक्चारित्र धारण करना ज़रूरी है।

सम्यक्चारित्र का पालन करने से जीव को स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनों को रत्नत्रय कहते हैं। इन तीनों का मिलना ही मोक्षमार्ग है। अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति का उपाय है। सर्व कर्म के बंधन से छूट जाने का नाम मोक्ष है।

प्रश्नावली

१ सम्यग्दर्शन किसे कहते हैं ? सम्यग्दृष्टि जीव मर कर कहाँ नहीं जाता ? बताओ सम्यग्दृष्टि जीव मर कर लड़की बन सकता है या नहीं ?

२ सम्यग्ज्ञान का स्वरूप क्या है ? बताओ सम्यग्दर्शन के बिना सम्यग्ज्ञान हो सकता है या नहीं ? सम्यग्ज्ञान की क्या महिमा है ?

३ सम्यक्चारित्र किसे कहते हैं ? सम्यक्चारित्र को धारण करना क्यों ज़रूरी है ?

४ "रत्नत्रय" किसे कहते हैं ? इसके पालन का क्या फल है ?

पाठ–१२

सत्संगति

"संगत ही गुण होत है, संगत ही गुण जान।
बाँस फाँस गुड़ मीसरी, एक ही मोल बिकात" ॥

मनुष्य स्वभाव से ही एक सामाजिक प्राणी है। वह अकेला एक दिन भी नहीं रह सकता। मिल जुल कर बैठने रहने महने का नाम ही संगति है। संगति दो प्रकार की होती है, एक सत्संगति यानी सज्जनों की संगति और दूसरी कुसंगति यानी दुष्टों की संगति।

सत्संगति जैसे सुखदायक है वैसे ही कुसंगति दुख-

दायक है। सत्संगति के प्रभावसे उन्नति होती है जब कि कुसंगति के कारण अच्छा आदमी भी बिगड़ जाता है।

संगति कीजे साधु की, हरै और की व्याधि।
संगति तजिये नीच की, आठों पहर उपाधि॥

संगति का प्रभाव मन पर अवश्य पड़ता है। इसलिये मनुष्य को निरालसी हो कर सदा उत्तम संगति का आश्रय लेना चाहिये। सत्संगति के लिये हमें सदाचारी स्त्री व पुरुषों के साथ रहना चाहिये। अच्छी अच्छी पुस्तकें पढ़नी चाहिये; विद्वानों के उपदेश सुनने चाहिये; और उनको याद रखना चाहिये; महात्माओं की सेवा भक्ति करनी चाहिये; बड़ों की विनय करनी चाहिये और छोटों के साथ अच्छा बर्ताव करना चाहिये।

कुसंगति के कारण अपयश फैल जाता है, धर्म बिगड़ जाता है, धन की हानि होती है और शरीर में अनेक रोग पैदा हो जाते हैं। जैसा किसी कवि ने कहा है—

जुवारी से रक्खोगे गर दोस्ताना,
जुवारी समझ लेगा तुमको ज़माना।
अगर आग के पास बैठोगे जा कर,
तो उठोगे एक दिन कपड़े जलाकर॥

यदि कभी ऐसा समय आ जाय कि परवश हो कर कुसंगति में रहना पड़े तो वहाँ ऐसा प्रयत्न करना चाहिये

कि जितने दुष्ट साथी हैं वे सबके सब सुधर जाँय। यदि ऐसा न हो सके तो कम से कम अपने आपको अवश्य बचाना चाहिये।

ज़हर के मिलाने से लड्डू प्राणनाशक होते हैं, और इलायची बादाम आदि मेवा मिलाने से पौष्टिक हो जाते हैं। कीचड़ की संगति से कपड़े मैले हो जाते हैं, और साबुन की संगति से साफ़ हो जाते हैं। इसलिये संत्सगति के गुण समझ कर कुसंगति का त्याग करना लाभदायक है।

एक बार एक शिकारी ने तोते के दो बच्चे पकड़ बाज़ार में ला कर बेचे। एक तो किसी भले आदमी ने मोल ले लिया और दूसरा किसी बदमाश के हाथ पड़ा। दोनों ने अपने अपने घर जा कर उनका पालन पोषण किया। भले आदमी का तोता अच्छी अच्छी बातें सीख गया और नीच घर के तोते ने गाली-गलौच आदि बुरी बातें सीखीं।

एक दिन उस नगर का राजा उस गली में से हो कर निकला तो नीच तोता गाली-गलौच बकने लगा। राजा को तोते की ये बातें बुरी तो बहुत लगीं परन्तु उसने उस समय कुछ न कहा। आगे जब वह उस भले आदमी के मकान के पास से निकला तो उसके तोते ने राजा को देख कर बड़े आदर-सत्कार के बचन कहे, जिनको सुन कर

३६ शरीर पर कम से कम सप्ताह में एक बार तेल मालिश करो।

राजा बहुत प्रसन्न हुआ। राजा ने यह भेद जान कर भले आदमी का बहुत आदर किया।

बालको! देखो दोनों तोते एक ही माँ के बच्चे थे। परन्तु संगति के प्रभाव से एक भला हो गया और दूसरा बुरा हो गया।

प्रश्नावली

१ संगति कैसी करनी चाहिये? कुसंगति से क्या क्या हानियाँ होती हैं?

२ उदाहरण द्वारा समझाओ कि मनुष्य अच्छी संगति से अच्छा और बुरी संगति से बुरा बनता है।

३ यदि कभी परवश हो कर कुसंगति में रहना पड़ जाय तो क्या करना चाहिये?

पाठ – १३

बालिका विनय

भगवान् सदा सुशीला श्रद्धावती बनें हम।
दोनों कुलों की शोभा लज्जावती बनें हम ॥ १ ॥
बनवास में पति का जिसने न साथ छोड़ा।
सत् शील की विधाता सीता सती बनें हम ॥ २ ॥
कुष्ठी पति को पा कर सेवा से मुँह न मोड़ा।
वह धर्म कर्म ज्ञाता मैना सती बनें हम ॥ ३ ॥

संकट सहे हज़ारों छोड़ा न शील लेकिन।
वह मनोरमा सुभद्रा अंजना सती बनें हम ॥ ४ ॥
अपने पति को जिसने जिन धर्म पर लगाया।
यह धर्म शास्त्र ज्ञाता चेलना सती बनें हम ॥ ५ ॥
"शिवराम" भेष धर कर क्षुल्लक करी परीक्षा।
सम्यक्त्व से डिगी ना वह रेवती बनें हम ॥ ६ ॥

प्रश्नावली

१ इस भजन के बनाने वाले का नाम बताओ।
२ सीता सती कौन थी ? और ये बन में क्यों गई थी ?
३ मैना सती का विवाह कुष्टी पति के साथ क्यों हो गया था ?

पाठ – १४

श्री महावीर भगवान्

बालको ! तुमने चौबीसवें तीर्थंकर श्री भगवान् महावीर का नाम सुना होगा। आज से क़रीव अढ़ाई हज़ार वर्ष पहले विहार प्रान्त के कुण्डलपुर नाम के नगर में नाथवंशीय सिद्धार्थ राजा राज्य करते थे। इनकी रानी त्रिशला वैशाली के राजा चेटक की पुत्री थी। चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन राजा सिद्धार्थ रानी त्रिशला के घर में राजकुमार श्री महावीर का जन्म हुआ; देश में मंगल छा गया।

राजकुमार महावीर इतने पुण्यशाली थे कि उनके जन्म से ही अनूठी अनूठी बातें होने लगीं। उन बातों को देख कर लोग उन्हें एक भाग्यवान बालक समझते थे। जैसी उनकी बुद्धि अनुपम थी वैसे ही उनका शरीर बड़ा सुन्दर और अतुल बलशाली था। कुण्डलपुर की प्रजा उनको देख कर फूले अंग न समाती थी।

जब महावीर पूरे आठ वर्ष के हुए तो उन्होंने सच बोलने, चोरी न करने, तथा किसी को न सताने की प्रतिज्ञायें कर लीं। वे ब्रह्मचर्य से रहने लगे। उन्हें सादगी पसंद थी; शौक़ के लिये बहुत वस्त्राभूषण रखना उन्हें पसन्द न था। वे गिने-चुने कपड़े अपने पास रखते थे। वे ऐश्वर्यवान ज़रूर थे तो भी वे अच्छे अच्छे कपड़े और ज़ेवर पहिन कर अपना स्वांग बनाना नहीं जानते थे, ग़रीब और दुखी लोगों की सेवा करना वे अपना धर्म समझते थे; यही उनका सच्चा आभूषण था।

एक रोज़ अपने साथियों के साथ वे बाग़ में खेल रहे थे। देखते देखते वहाँ एक बड़ा भयानक काला साँप आ निकला। सब लड़के घबरा गये। सबको अपने अपने प्राणों की पड़ गई। किसी को रक्षा का कोई उपाय न सूझ पड़ा। परन्तु महावीर ने हिम्मत न हारी। उन्होंने निडर

होकर उस साँप को भगा दिया, और अपने साथियों को अभय बना दिया।

इसी तरह एक बार राजकुमार महावीर राजमहल में बैठे हुए थे। नगर में अचानक कोलाहल मचने की आवाज़ कानों में पड़ी। पूछने पर मालूम हुआ कि राजा का हाथी मतवाला हो रस्सी तुड़ा कर भागा है और लोगों को दुख दे रहा है। इतना सुनना था की महावीर एकदम घटनास्थल पर जा पहुँचे। उन्होंने कहा "मेरे होते हुए कुण्डलपुर की प्रजा को कष्ट नहीं हो सकता।" और हुई भी यही बात। महावीर ने बात की बात में उस हाथी को पकड़ कर महाव्रत के हवाले कर दिया। लोग बड़े प्रसन्न हुए और राजकुमार की प्रशंसा करने लगे।

राजकुमार महावीर अब पूर्ण युवक हो गये थे। राजा सिद्धार्थ ने इनके विवाह करने का विचार किया। कलिंग देश की राजकुमारी यशोधरा से उनका विवाह पक्का हो गया था। परन्तु महावीर ने जब यह बात सुनी तो द्विविधा में पड़ गये। कर्तव्य उनके हृदय में आत्म-कल्याण, और दुखी लोक का कल्याण करने के लिये उत्साहित कर रहा था। पिता का आदर गृहस्थ अवस्था

में रहने को कह रहा था। पर राजकुमार महावीर सरीखे होनहार पराक्रमी युवक भला कर्तव्य पालन से कब विमुख हो सकते थे। उन्होंने राजा सिद्धार्थ को अपने कर्तव्य का भान कराया, और विवाह नहीं कराया।

उन्हें स्वपर कल्याण करना इष्ट था इसलिये वे अधिक दिनों तक राजमहल में नहीं रहे। उन्होंने स्वार्थ को प्रकट करने वाला सूत का एक धागा भी अपने शरीर पर न रक्खा। राजकुमार महावीर तीस वर्ष की आयु में दिगम्बर मुनि हो गये, और सिद्धि पाने के लिये कठिन तपस्या करने लगे। उन्होंने बारह वर्ष तप किया और अन्त में समदर्शी और सर्वज्ञ हो गये। लोग उन्हें तीर्थंकर, वीर, महावीर, अतिवीर, सन्मति, वर्द्धमान कह कर पुकारने लगे।

इस घटना के बाद तीर्थंकर महावीर ने लोक के कल्याण के लिये उपदेश देना प्रारम्भ किया। मनुष्यमात्र को उन्होंने आत्म-स्वातन्त्र्य का संदेश सुनाया और विश्वप्रेम का झंडा फहराया। लोग आपसी भेदभाव को भूल गये और प्रेम से रहने लगे। अब कोई किसी जीव को नहीं सताता था। पशु पक्षियों का मारा जाना भी बन्द हो गया। सब ही प्राणी बड़े प्रसन्न हुए!

तीस वर्ष तक जनता को धर्मामृत का पान करा कर तीर्थंकर महावीर पावापुर पहुँचे। वहाँ वे योग में स्थिर हो

गये। ७२ वर्ष की आयु में मुक्त हो गये। संसार के जन्म-मरण के दुखों से छूट गये। यह कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी की पिछली रात्रि थी। महावीर प्रभु को मुक्त हुआ सुन कर सेठ साहूकार राजे-महाराजे सब पावापुर को चल पड़े। उसी वक्त उन्होंने घी के दीपक जलाये और भगवान् के गुणों का चिंतवन किया। भारत के इस महापुरुष की पवित्र याद में यह दिन राष्ट्रीय त्यौहार नियत किया गया, और यह दीपावली के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

लड़को! तुम भी राजकुमार महावीर की तरह सादगी से रहना सीखो। सदा सबसे प्रेम करो। जितनी तुमसे दूसरों की भलाई हो सके करो। मौज शौक़ और स्वार्थ को कर्तव्य के सामने तुच्छ समझ, दलित और त्रस्त जीवों की रक्षा अपने प्राणों पर खेल कर करो, और ज्ञान पाने के लिये जी जान से प्रयत्न करो। यदि तुम इतना करोगे तो लोग तुम्हें प्यार करेंगे और वे युग युगान्तर तक तुम्हारा नाम लेते रहेंगे।

महावीर स्वामी का जन्म दिवस चैत सुदी १३ है। इस दिन उनकी वीर जयंती मनाओ, पूजा पाठ करो धर्मोपदेश का प्रचार करो। जगत भर में न्याय, नम्रता और आत्मानुभव का सुखदायी उपदेश फैला दो।

वर्तमान् के अत्यन्त प्रसिद्ध चौबीस तीर्थंकरों में करीब २५०० वर्ष हुए श्री महावीर अन्तिम तीर्थंकर हुए हैं।

प्रश्नावली

१ महावीर स्वामी का जन्म कब और कहाँ हुआ? महावीर स्वामी का जन्म किस वंश में हुआ? इनके माता पिता कौन थे, नाम बताओ?

२ महावीर स्वामी कौन से तीर्थंकर हैं? महावीर स्वामी को और किन नामों से पुकारते हैं?

३ महावीर स्वामी के बाल्य जीवन की घटनायें बताओ कि किस प्रकार वे दूसरों की सहायता किया करते थे?

४ कितनी आयु में महावीर स्वामी मुनि हो गये थे?

५ उन्होंने कितने दिन तप किया?

६ महावीर स्वामी के निर्वाण दिन को हम लोग आज तक किस रूप में मनाते चले आ रहे हैं।

७ महावीर भगवान् का क्या संदेश था और उनकी क्या शिक्षा थी? संक्षेप से अपने शब्दों में बताओ।

पाठ – १५

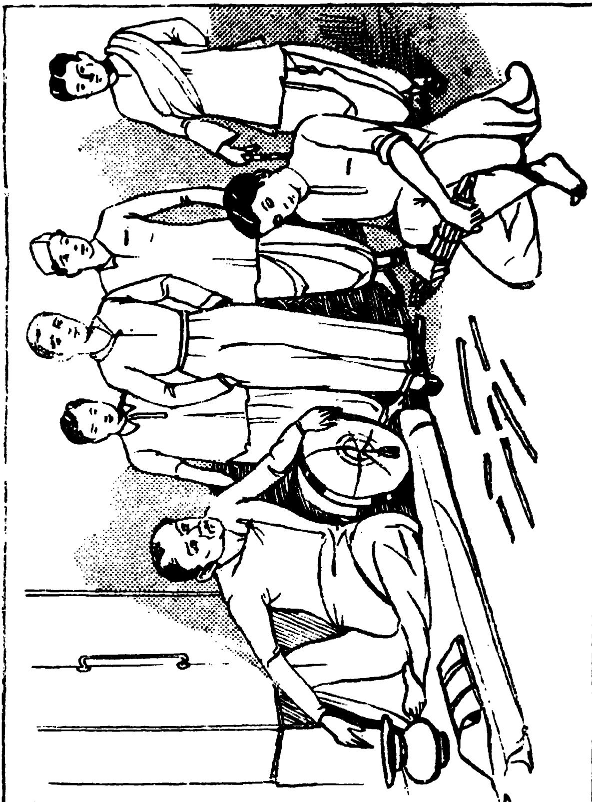
वीर स्तवन (भजन)

सब मिलके आज कहो, श्री वीर प्रभु की ।
मस्तक झुका कर जय कहो, श्री वीर प्रभु की ॥ १ ॥
विघ्नों का नाश होता है, लेने से नाम के ।
माला सदा जपते रहो, श्री वीर प्रभु की ॥ २ ॥
ज्ञानी बनो दानी बनो, बलवान भी बनो ।
अकलंक सम बन कर कहो, जय वीर प्रभु की ॥ ३ ॥
हो कर स्वतंत्र धर्म की, रक्षा सदा करो ।
निर्भय बनो और जय कहो, श्री वीर प्रभु की ॥ ४ ॥
तुझको भी अगर मोक्ष की, इच्छा हुई ऐ 'दास' ।
उस वाणी पै श्रद्धा करो, श्री वीर प्रभु की ॥ ५ ॥

प्रश्नावली

१ इस भजन के बनाने वाले ने किस की जय मनाई है? वे कौन थे?
२ धर्म की रक्षा किस प्रकार करनी चाहिये?
३ इस भजन को मुखाग्र सुनाओ ।

पाठ–१६
सेठ के पाँच पुत्र



किसी एक वृद्ध पुरुष के पाँच पुत्र थे। वे साधारण

बात पर भी आपस में लड़ते झगड़ते रहते थे। उनके पिता ने उन्हें बहुत प्रकार से समझाया, परन्तु उहोंने उस पर कुछ ध्यान न दिया। तब उस वृद्ध पिता ने एक युक्ति सोची।

एक दिन उसने रस्सी से मज़बूत बँधा हुआ पतली लकड़ियों का एक गट्ठा मँगवाया, और प्रत्येक लड़के से उस गट्ठे को तोड़ने के लिये कहा, मगर उनमें से कोई तोड़ न सका। फिर उनके पिता ने उस गट्ठे को खोल कर जुदा जुदा लकड़ी को तोड़ने के लिये कहा, तो उनमें से हर एक लकड़ी को जुदा जुदा करके उन्होंने बड़ी आसानी से तोड़ डाला।

इस पर उनके पिता ने उन्हें समझाया और कहा "ज़रा सोच कर देखो," एकता में कितना बल है। तुममें से हर एक कोई भी मज़बूत बंधी हुई लकड़ी के गट्ठे को न तोड़ सका, परन्तु उन्हीं को जुदा जुदा करके तुमने कैसी सुगमता से तोड़ डाला। इससे तुमको यह शिक्षा लेनी चाहिये कि तुम आपस में मिल जुल कर प्रेम से रहोगे तो कोई भी तुम्हें हानि न पहुँचा सकेगा, और यदि तुम आपस में ही विरोध करोगे, तो जुदी जुदी लकड़ियों की तरह तुम्हारा सहज में ही नाश हो जायगा।

अपने पिता की बात सुन कर पाँचों भाई बड़े खुश हुए, और पिता की मृत्यु के पश्चात् आपस में मेल से रह कर सुख से समय व्यतीत करने लगे।

बालको! ऐक्य सर्वशक्ति का मूल है। तुम सबको आपस में बड़े प्रेम से मिल-जुल कर रहना चाहिये। जिस कुटुम्ब, जाति तथा देश में फूट होती है वह निर्बल हो जाता है; उसे हर कोई दबा लेता है; वह कोई उन्नति नहीं कर सकता और उसका सहज ही में नाश हो जाता है।

प्रश्नावली

१ सेठ के कितने पुत्र थे? और उनकी क्या आदत पड़ गई थी?

२ बूढ़े पिता ने अपने लड़कों को एकता की महिमा समझाने के लिये क्या प्रयत्न किया?

३ एकता किसे कहते हैं? आपस में मिल जुल कर रहने से क्या लाभ है?

४ बंधे हुए गट्ठे को लड़के क्यों नहीं तोड़ सके?

५ इस कहानी से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?

पाठ – १७

धर्ममहिमा

धर्म बिन कौन उतारे पार।

धर्म करत संसार सुख, धर्म करत निर्वाण।
धर्म पंथ साधे बिना, नर तिर्यंच समान ॥ टेक ॥
धर्म प्रभाव मिलत है मित्रो, सुख संपति भंडार।
रोग रहित शुभ नर तन पावत, उत्तम कुल अवतार ॥ १ ॥
बीज राख फल भोगत प्यारे, ज्यों किसान जग मांहि।
तैसे भोगो भोग उचित तुम, धर्म विमारो नांहि ॥ २ ॥
धन दे तन को राखिये प्यारे, तन दे राखिये लाज।
धन दे तन दे लाज दे, प्यारे एक धर्म के काज ॥ ३ ॥
देव गुरु श्रुत भक्ति करो नित, धर्म दया चित धार।
दान सुपात्रन को नित दीजे, कीजे पर उपकार ॥ ४ ॥
जल में थल में बन में रण में, पड़े जो संकट आन।
धर्म ही रक्षक होत वहाँ पर, धर्म करे 'शिव' थान ॥ ५ ॥

प्रश्नावली

१ संसार में कौनसी ऐसी शक्ति है जो हमें पार उतार सकती है?
२ धर्म के बिना मनुष्य का क्या मूल्य है?
३ अपने धर्म की रक्षा किस प्रकार करनी चाहिये?
४ संकट के समय कौन रक्षा करता हैं?

पाठ – १८

जुए से हानि



कुरु देश में हस्तिनापुर एक मनोहर नगर था। उसके राजा का नाम धृत था। राजा धृत बड़ा नीतिज्ञ और बुद्धिमान था। उसके धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर ये तीन पुत्र हुए। इनमें धृतराष्ट्र के दुर्योधन वग़ैरह सौ पुत्र और पाण्डु के युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव ये पाँच पुत्र हुये। धृतराष्ट्र पाण्डु के साथ राज्य करते थे।

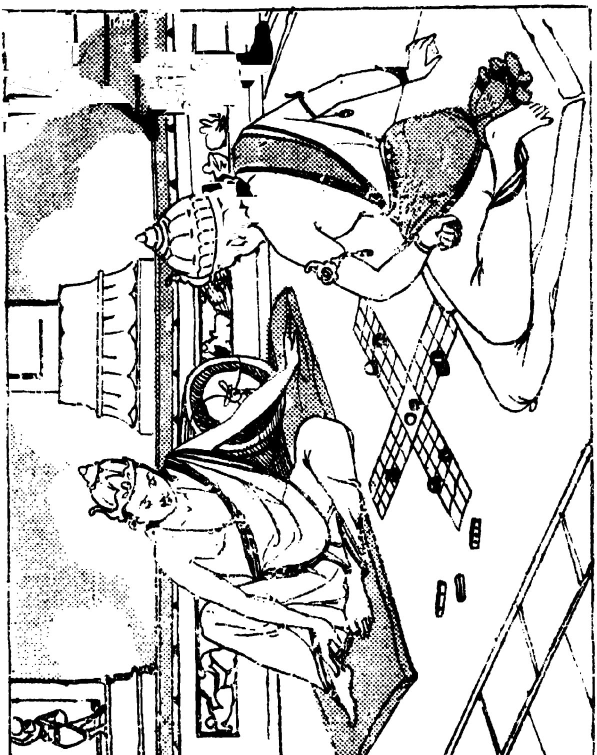
जब धृतराष्ट्र और पाण्डवों को साथ साथ राज्य का पालन करते हुए बहुत दिन हो गये तो पाण्डु को किसी कारण से वैराग्य हो आया। उन्होंने उसी समय अपने राज्य के दो विभाग करके एक युधिष्ठिर आदि पाँच पाण्डवों को और दूसरा दुर्योधन आदि कौरवों को दे दिया और आप मुनि हो गये।

दुर्योधन आदि कौरव आधे राज्य को पा कर सन्तुष्ट न हुए; वे पांडवों से द्वेष करने लगे। और हर समय इसी विचार में रहने लगे कि किसी प्रकार पांडवों को राज्य भ्रष्ट करके सारे राज्य पर अपना अधिकार जमा लें। इस उद्देश्य से उन्होंने पांडवों को कई फंदों में फँसाना चाहा, परन्तु सफल न हुए।

एक दिन दुर्बुद्धि दुर्योधन ने कपट से पांडवों को सभा में बुलाया और स्नेह भरे बचनों से युधिष्ठिर से कहा—'आइये, दिल बहलाने के लिये जुआ खेलें।' इस पर युधिष्ठिर और दुर्योधन दोनों जुआ खेलने लगे। यद्यपि दुर्योधन बड़ी चतुराई से पासा फेंकता था पर भीम की हुँकार से उसका हाथ काँप कर उल्टा गिर जाता था। यह देख दुर्योधन ने किसी काम के बहाने भीम को बाहर भेज दिया। भीम को बाहर गये बड़ी देर हो गई। इधर दुर्योधन की बन पड़ी। उसकी जीत का पासा पड़ने लगा।

५० दोस्ती करने पर दोस्त की मुसीबत में काम आवो ।

युधिष्ठिर ने पहले अपना ख़ज़ाना हारा, फिर देश हारा; फिर क्रम से हाथी, घोड़े, वाहन, गाय, भैंस आदि सब वे



हार गये । अन्त में उनके पास अन्तःपुर की द्रौपदी आदि स्त्रियों के जो कुछ आभूषण थे वे भी हार गये ।

इतने में हुंकार करता भीम भी वहाँ आ पहुँचा। जब उसने युधिष्ठिर को अपनी सारी सम्पत्ति को हारा हुआ और उदास देखा तो वह दुर्योधन की सब चालबाज़ी समझ गया। जान लिया दुर्योधन ने मुझे बड़ा भारी धोखा दिया। इससे भीम को बड़ा दुख हुआ।

इसके बाद युधिष्ठिर दुःखित हो कर भीम आदि के साथ अपने घर चला गया। वे घर पहुँच भी न पाये थे कि दुर्योधन ने उनके पास एक दूत भेजा। उसने आ कर युधिष्ठिर को प्रणाम किया और कहा—'हे नाथ! दुर्योधन महाराज कहते हैं कि आप बारह वर्ष के लिए यहाँ से आज ही रात को चले जाँय, नहीं तो आपको कष्ट उठाना पड़ेगा।' यह कह कर दूत चला गया।

इधर दुष्ट दुःशासन द्रौपदी के आभूषण उतारने के लिए उसका वस्त्र खींचने लगा और बुरे शब्दों से उसका तिरस्कार किया। अर्जुन और भीम द्रौपदी के इस अपमान को न सह सके। भीम ने क्रोधित हो युधिष्ठिर से कहा—'स्वामिन्! आज मैं शत्रुओं के कुल को जड़मूल से उखाड़ फेंक देता हूँ' पर युधिष्ठिर ने अपने बचन रूपी शीतल जल से उसका क्रोध शांत कर दिया, और कहा—'यह निश्चय है, चाहे जो हो पर मैं अपना बचन नहीं हारूँगा। मेरे पराक्रमी वीरो! अब यहाँ रहने का ख्याल छोड़ कर शीघ्र चल दो

और बन में जा कर डेरा डालो। अब से हमें बन ही अपनी राजधानी बनानी होगी।'

युधिष्ठिर के इन बचनों को सुन कर द्रौपदी सहित सब भाई बन चलने को उठ खड़े हुए। राज्य सम्पदा को तृणकी तरह छोड़ कर, बन में कितने ही दिनों तक मार्ग के कष्टों को सहते हुए घूमते रहे।

बालको, जुए के समान संसार में कोई पाप नहीं। पांडव सरीखे प्रबल प्रतापी योद्धाओं को भी जुआ खेलने से अपने देश से भ्रष्ट हो कर कैसी कैसी भयंकर आपदायें सहनी पड़ीं। जुआ नरक का मार्ग है; दुःख रूपी सर्प का बिल है; धर्म का घातक है; सब दोषों का स्थान है; आपत्ति का समुद्र है; विवेक भुलाने वाला है। जुआ अन्य सब व्यसनों में मुख्य है। इसलिये जो सुखी रहना चाहते हैं उन्हें चाहिये कि सब अनर्थों के मूल जुए को दूर से ही छोड़े।

प्रश्नावली

१ पाण्डव कौन थे ? और कितने थे, बताओ इनका नाम पाण्डव क्यों पड़ा ?
२ दुर्योधन कौन था और यह पाण्डवोंसे क्यों जलने लगा था।
३ दुर्योधन ने पाण्डवों को कैसे हरा दिया ?
४ जूआ खेलने से पाण्डवों को क्या हानि हुई ?
५ जूआ किसे कहते हैं ? कीसी काम में हार जीत लगाना जूआ है या नहीं ?
६ जूए के खेल से क्या क्या हानियाँ होती हैं ?
७ इस कहानी से तुम्हें क्या क्या शिक्षा मिलती हैं ?

पाठ – १९

मांसाहार का कुफल

श्रुतपुर नगर में बक नामक राजा रहता था। वह प्रजा का शासन करने में बड़ा चतुर था, परन्तु धर्महीन था। उसे किसी कारण से माँस खाने की आदत पड़ गई। वह अपना अधिकांश समय मांस खाने के विचारों में ही बिताता था। उसका रसोइया सदा माँस पका पका कर उसे देता था। यही नीच निर्दयी बक के लिये पशुओं का नित्य घात करता था।

एक दिन रसोइये को पशु का मांस न मिला, तब वह दुष्ट मांस की खोज में निकला। श्मशान भूमि में से किसी मरे हुए बच्चे को खोद कर ले आया। पापी ने उस बच्चे के माँस को मसाला आदि डाल कर बड़ी चतुराई से पकाया और राजा बक को खिला दिया। राजा को वह मांस बड़ा स्वादिष्ट मालूम हुआ।

उस मांस लोलुपी राजा ने रसोइये से कहा—'ऐसा स्वादिष्ट मांस कहां से लाये हो, मैंने तो कभी ऐसा उत्तम मांस खाया ही नहीं।' यह सुन कर रसोइया अभयदान माँग कर डरता डरता बोला—'प्रभो, क्षमा कीजिये, यह मनुष्य का मांस है। आज जब कहीं से भी पशु का

मांस नहीं मिला, तब इसे चतुराई से पका कर आपको खिलाया है।'

यह सुन कर राजा बोला—'यह मांस मुझे बहुत ही अच्छा मालूम हुआ है, इसलिये अब आइन्दा तुम मुझे मनुष्य का ही मांस खिलाया करो।' राजा की यह आज्ञा पा कर रसोइया अब तो और भी निडर हो गया। अब वह शाम को मिठाई फल आदि ले कर जहाँ बच्चे खेला करते थे वहाँ जाने लगा। वह पापी अवसर पा कर उनमें से एक को पकड़ लेता, और उसे मार कर उसका मांस राजा को खिला देता। इस तरह वह रोज निंद्य कर्म करने लगा।

धीरे धीरे जब नगर के बच्चे प्रतिदिन कम होने लगे तो सारे नगर में खलबली पड़ गई। लोगों ने गुप्त रीति से बच्चों के घातक की खोज लगाना आरंभ किया। थोड़े ही दिनों में वह रसोइया पकड़ा गया। पूछने पर उसने साफ साफ कह दिया—'मेरा कुछ भी अपराध नहीं, मैंने जो कुछ भी किया है राजा की आज्ञानुसार किया है।' राजा की अनीति देख कर लोगों को बड़ा विस्मय हुआ। वे विचारने लगे—'वह राजा प्रजा का क्या भला कर सकता है, जो हमारी संतान को खाने वाला है। तथा जब हमारे बाल बच्चे ही न रहेंगे तो हमारा जीवन ही किस काम

का ? धन धान्यादि जितनी वस्तुयें हम संग्रह करते हैं, सब बच्चों के लिये ही तो करते हैं । ऐसी दशा में हम लोग यहाँ रहेंगे तो हमारा सर्वनाश हो जायगा।'

अंत में सब लोगों ने विचार कर यह निश्चित किया कि यह राजा बड़ा दुष्ट और पापी है । इसे देश से निकाल देना चाहिये। हम लोग ऐसे राजा को कैसे रख सकते हैं? और क्योंकर उसकी सेवा कर सकते हैं? अगले दिन सब लोग राज-दरबार में गये । राजा सिंहासन पर बैठा हुआ था। सब लोगों ने मिल कर उसे राजगद्दी से उतार दिया, और उसके किसी गोत्रीय पुरुष को सिंहासन पर बैठा दिया।

इस प्रकार राजा वक राज्य से भ्रष्ट हो कर दुःख से दिन बिताने लगा पर उसकी पाप-वासना न बुझी । लोगों ने उसका नगर में आना बंद कर दिया । लोग उसे राक्षस समझने लगे। वह यहाँ तक क्रूर हो गया कि जो जीव उसके सामने आ जाता, उसे जीता न छोड़ता। ठीक है वैसे खोटे मार्ग में जाने वालों को विचार कहाँ रहता है । एक दिन वन में घूमते हुए उसे वसुदेव ने देखा । वसुदेव बड़े नीतिज्ञ और बलवान थे, यद्यपि वह उस समय अकेले थे, तो भी वे निर्भय हो कर वक से लड़े, और उसे मार गिराया। वक मर कर दुर्गति में गया।

देखो, कहाँ तो बक का उत्तम राज्य और कुल और कहाँ मनुष्यों के मांस का खाना। इसी से उसे राज्य से पतित होना पड़ा और अन्त में दुर्गति को जाना पड़ा।

सच है अन्यायी तथा अत्याचारी का किसी जगह सत्कार नहीं होता, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो। उसके माता, पिता, पुत्र, मंत्री आदि सब उसके विरुद्ध हो शत्रु बन जाते हैं। मांस न वृक्षों से उत्पन्न होता है, न पृथ्वी पर उगता है और न पहाड़ से पैदा होता है। यह निरपराध पशु, पक्षी आदि जीवों के मारने से पैदा होता हैं। मांस के खाने से अनेक रोग पैदा हो जाते हैं। बुद्धि बिगड जाती है। उसका तो छूना भी पाप है। सारांश यह है कि मांस निंद्य है; पाप का मूल है; पवित्रता का सर्वनाश करने वाला है; दुःख का देने वाला है; दोनों लोकों में बुराई का हेतु है। इसलिये धर्मात्मा पुरुष मांस कभी नहीं खाते हैं।

प्रश्नावली

१ मांस खाना क्यों बुरा है?

२ मांस खाने से क्या क्या हानियां होती हैं?

३ मांसाहारी किसे कहते हैं? बक राजा को मांस खाने के कारण क्या कष्ट उठाना पड़ा?

४ बक राजा की कहानी सुनाओ और बताओ कि इस कहानी से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?

पाठ – २०
मदिरापान से हानि



एक समय एक पात् नाम का विद्वान् ब्राह्मण संन्यासी

अपने नगर से गंगाजी की यात्रा के लिये रवाना हुआ। चलते चलते वह विन्ध्याटवी में जा पहुँचा। वहाँ कुछ नीच लोग मदिरा पी पी कर नाच-कूद रहे थे, गा रहे थे और अनेक प्रकार की कुचेष्टाओं में मस्त थे। अभागा संन्यासी इस टोली के हाथ पड़ गया।

चांडालों ने संन्यासी का बड़ा आदर किया और कहने लगे—'आइये महाराज! आज हमारे लिये बड़ी खुशी का दिन है, जो आप सरीखे महात्मा इस खुशी के मौके पर हमारे यहाँ पधारे। आइये, मांस भक्षण कीजिये, शराब पीजिये और हमारे साथ नाच कूद में शामिल हो कर मज़े उड़ाइये।'

चांडालों की ऐसी बातें सुन कर बेचारे संन्यासी के तो होश उड़ गये। इन शराबियों को क्या कहें? इन्हें कैसे समझायें? बेचारा बड़े संकट में पड़ गया। फिर कुछ सोच कर बोला—'भाइयो, एक तो मैं ब्राह्मण और फिर उसमें भी संन्यासी। भला बताओ मैं मांस-मदिरा कैसे सेवन कर सकता हूँ? कृपा कर मुझे जाने दीजिये।'

इस पर उन चांडालोंने कहा—'महाराज, कुछ भी हो हम तो आपको कुछ प्रसाद पाए बिना नहीं जाने देंगे। यदि आप अपनी राज़ी से खा लें तो अच्छा है। नहीं तो जैसे बनेगा वैसे हम खिला कर छोड़ेंगे। हमारी प्रार्थना स्वीकार किये

बिना आप जीते जी गंगाजी नहीं जा सकते।' अब तो संन्यासीजी घबराये और मन ही मन में सोचने लगे–'यदि मैं मांस खाता हूं या विषय सेवन करता हूँ तो बड़ा दोष लगेगा और उसका दंड भी कठिन भुगतना पड़ेगा। पर जो साधारण जौ, गुड़, आँवले आदि से बनी शराब पीते हैं, वह शराब पीना नहीं कहा जा सकता। इसलिये जैसी शराब मुझे ये पिलाते हैं उसके पीने में न कुछ दोष है, न उससे मेरा संन्यास ही बिगड़ता है।

यह विचार कर उस मूर्ख ने शराब पी ली। शराब पीने के थोड़ी देर बाद नशा चढ़ने लगा। बिचारे ने कभी शराब नहीं पी थी, इसलिये उसपर शराब का और भी अधिक नशा चढ़ा। शराब के नशे में चूर हो कर वह सब सुध-बुध भूल गया। उसे अपने पराये का ज्ञान न रहा, वह बेहूदा बकवाद करने लगा। लंगोटी फेंक कर वह भी उन लोगों की तरह नाचने कूदने लगा। सच है खोटी संगति कुल, धर्म, पवित्रता आदि सब बातों का नाश कर देती है।

बहुत देर तक तो संन्यासी उसी तरह नाचता कूदता रहा। पर जब कुछ थोड़ा सा थक गया तो उसे बड़े ज़ोर की भूख लगी। वहां पर खाने के लिये मांस के सिवाय क्या था? संन्यासी ने उसे ही खा लिया। संन्यासी नशे में तो था ही, पेट-भर खाते ही उसे काम-विकार ने सताया।

उसने एक चांडाल की स्त्री की ओर बुरी दृष्टि से देखा और उसके प्रति अपनी बुरी वासना प्रकट की। चांडाल लोग अपनी स्त्री का यह तिरस्कार न सह सके। संन्यासी को मार मार कर उन्होंने उसकी खूब गत बनाई। उनमें से एक ने संन्यासी को अपनी भुजाओं के बीच में पकड़ कर इतने ज़ोर से दबाया कि बेचारे के प्राण पखेरू उड़ गये। इस प्रकार आर्तध्यान से मर कर वह खोटी गति में गया।

देखो संन्यासी कैसा विद्वान् और धर्मात्मा था, लेकिन मदिरा पीने से उसकी कैसी गति हुई। उसका सब धर्म-कर्म भ्रष्ट हो गया; विवेक जाता रहा। अन्त में मदिरा के कारण उसे अपने प्राण तक देने पड़े।

मदिरा पीने वाला सदाचरण को भूल जाता है; हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील आदि पाप करने लगता है। मदिरा पीने से लाभ कुछ नहीं होता, किन्तु बहुत से शारीरिक और मानसिक कष्ट सहने पड़ते हैं; अनेक रोग हो जाते हैं। नशा हर प्रकार का बुरा है। गांजा, चरस, अफीम, बीडी, चुरट, तम्बाकू सभी मादक पदार्थ बुरे होते हैं। इनका भूल कर भी सेवन नहीं करना चाहिये। जो पुरुष मदिरा या अन्य नशीली चीजों के सेवन करने वालों का साथ करते हैं उन्हें बहुत दुःख उठाने पड़ते हैं। मदिरा बड़ी अपवित्र होती है। वह चीजें सड़ा कर बनाई जाती है। हिंसा की यह खानी है। दूसरे

भाग में तुम पढ़ चुके हो कि मदिरा पान से यादवों का सर्वनाश हुआ और द्वारका जल गई। इसलिये मदिरा आदि नशीली चीजों का सेवन नहीं करना चाहिये। कुलीन पुरुषों को तो मदिरा छूना भी नहीं चाहिये।

प्रश्नावली

१ संन्यासी को शराब पीने की बुरी आदत कैसे पड़ गई?

२ शराब पीने से संन्यासी की क्या दुर्गति हुई?

३ तुम्हारी समझ में शराब पीने वाला अहिंसा धर्म का पालन कर सकता है या नहीं?

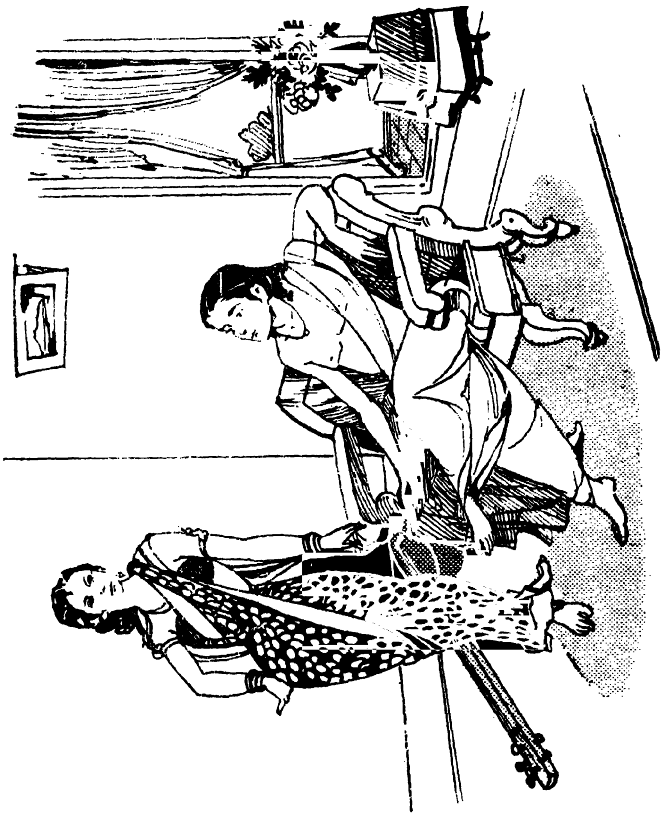
४ मदिरा-पान से क्या क्या हानियाँ होती हैं?

५ इस कहानी को पढ़ कर तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?

६ बीड़ी, चुरट, तम्बाकू का सेवन अच्छा है या बुरा?

पाठ – २१

वेश्यागमन से हानि



चम्पापुरी में एक भानुदत्त सेठ रहता था । उसकी स्त्री का

नाम सुभद्रा था। पुण्योदय से उसके एक पुत्र हुआ। उसका नाम चारुदत्त रक्खा गया। चारुदत्त की बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। पढ़ने योग्य होने पर उसके पिता ने उसे गुरु के पास पढ़ने भेज दिया। चारुदत्त बड़ा सुशील, बुद्धिमान और परिश्रमी था। थोड़े ही दिनों में उसने अनेक शास्त्र पढ़ लिये।

चारुदत्त दयालु और परोपकारी बालक था। एक समय वह अपने मित्रों के साथ बगीचे में खेल रहा था कि उसके कानों में कहीं से रोने की आवाज़ आई। आवाज़ सुनते ही चारुदत्त का हृदय दया से उमड़ आया। जिस ओर से आवाज़ आ रही थी वह उस ओर चल पड़ा। थोड़ी दूर जा कर उसने देखा कि कोई पुरुष कीलित हो कर बँधा हुआ, एक वृक्ष की डाली में लटका हुआ है और बड़े कष्ट में है। चारुदत्त उसके पास गया और उसी समय अपनी चतुराई से उसे बंधन रहित कर दिया। उसको धैर्य बंधाया और योग्य औषधि तथा आहार पान दे कर उसे सन्तुष्ट किया।

दोहा — निज सुख की परवा न कर, पर दुख करते दूर।
जन्म सफल करते सदा, वे दयालु वे शूर॥

जब चारुदत्त पढ़ लिख कर निपुण हो गया तो उसके पिता ने उसका विवाह सिद्धार्थ सेठ की मित्रावती

नाम की कन्या के साथ कर दिया। मित्रावती बड़ी सुशिक्षिता और सदाचारिणी थी। यद्यपि चारुदत्त का विवाह हो गया था पर विवाह का रहस्य अभी तक उसकी समझ में न आया। उसे विषय-वासना छू तक नहीं पाई थी। उसे तो रात दिन अपनी पुस्तकों से प्रेम था। वह उन्हींके अभ्यास, विचार, मनन आदि में सदा मग्न रहा करता था।

इसी चम्पापुरी में एक वेश्या रहती थी। उसका नाम था बसंततिलका। उसके यहाँ, परम सुन्दरी और सब प्रकार की कलाओं में चतुर बसंतसेना नाम की उसकी कन्या भी रहती थी। एक दिन चारुदत्त अपने चचा रुद्रदत्त के साथ घूमने को गया। वे दोनों बसंततिलका के मकान के नीचे पहुँचे ही थे कि इतने में राजाके दो हाथी लड़ते लड़ते वहाँ आ पहुँचे। उनकी लड़ाई से सड़क बन्द हो गई। बचने का और कोई उपाय न देख रुद्रदत्त जल्दी से चारुदत्त का हाथ पकड़ बसंततिलका वेश्या के मकान पर जा चढ़े। वह वेश्या रुद्रदत्त को तो पहिले से ही जानती थी। सड़क खुलने तक रुद्रदत्त बसंततिलका के साथ शतरंज खेलने लगा और चारुदत्त बैठा रहा। खेल में रुद्रदत्त कई बार हारा; चारुदत्त अपने चचा को हारता देख कर स्वयं खेलने लगा।

खेलते खेलते बसंततिलका चारुदत्त से कहने लगी—'सेठ साहब! देखो मैं तो बूढ़ी हो चुकी हूँ। आप अभी युवा हैं। इसलिये मेरे साथ आपका खेलना उचित नहीं मालूम देता। मेरी एक परम सुन्दरी पुत्री बसंतसेना है; आप उसके साथ खेलें। मैं उसे अभी बुलाये देती हूँ। चारुदत्त बोला—'जैसा आप उचित समझें, मुझे कुछ इन्कार नहीं है।' बसंतसेना आ गई और चारुदत्त उसके साथ शतरंज खेलने लगा। खेलते खेलते वह उस पर मोहित हो गया। चारुदत्त ने अपना बहुत सा धन उस वेश्या को दे डाला। आखिरमें वह वेश्या के मकान पर ही रहने लगा।

चारुदत्त के पिता भानुदत्त ने चारुदत्त को बुलाने के लिये अनेक प्रयत्न किये पर उसके एक न लगी। उसने पिता के घर जाने से सर्वथा इन्कार कर दिया। पुत्र की यह अवस्था देख कर भानुदत्त ने सोचा कि, यह कुव्यसन की परम सीमा पर पहुँच चुका है, इसका छुटकारा होना कठिन है। जैसा जिसका कर्म है वह उस के अनुसार फल भोगता है। मैं अपने कर्तव्य से क्यों चूकूँ? यह विचार कर वह साधु हो गया और अपनी आत्मा का कल्याण करने लगा।

इधर चारुदत्त की हालत दिनों दिन अधिक बुरी होने लगी। उसने अपना सब धन नष्ट कर डाला। जब पैसा

पास न रहा तो अपना मकान गिरवी रख दिया। अपनी माता और स्त्री का सब ज़ेवर नष्ट कर डाला। अहा! कर्म का फल बड़ा विचित्र होता है! कौन जानता था कि चारुदत्त की यह दशा हो जायगी, और उसे एक-एक पैसे से मुहताज़ होना पड़ेगा। चारुदत्त को ऐसा दीन, दरिद्री समझ कर, बूढ़ी गणिका ने अपनी लड़की से कहा—'पुत्री अब चारुदत्त भिखारी, दरिद्री हो चुका है। अब इसकी प्रीति छोड़ दो और किसी अन्य धनिक युवा के साथ प्रेम करो। वेश्याओं का यही कर्तव्य है कि सुन्दर होने पर भी वह निर्धन पुरुष से प्रेम करना छोड़ दें।' बसंतसेना पर इन बातों का कुछ असर न हुआ।

एक बार रात्री को चारुदत्त और बसंतसेना गहरी नींद सो रहे थे। बसंततिलका ने भोजन के साथ कोई नशीली वस्तु खिला दी थी। निद्रा के आधीन देख बसंततिलका ने चारुदत्त के सब वस्त्राभूषण उतार लिये और उसकी एक गठरी सी बना कर नीचे पाखाने में डाल दिया। जब प्रातःकाल हुआ तो कुत्ते उसका मुँह चाटने लगे। इस समय पुलिस का एक सिपाही भी वहाँ आ गया। उसने चारुदत्त को पाखाने से बाहर निकलवाया। उसे कुछ सुध आई। वह बसंततिलका की सब बदमाशी समझ गया। सिपाही के

पूछने पर उसने अपना सारा वृत्तांत कह सुनाया। अपनी दशा देख उसे दुख हुआ।

अब तो चारुदत्त की आंखें कुछ खुलीं। विचारने लगा, वेश्याओं की प्रीति धन के ही साथ होती है। जिसके पास जब तक पैसा रहता है, उससे तभी तक वे प्रेम करती हैं। जहां धन नहीं वहां वेश्या का प्रेम नहीं। अब उसे जान पड़ा कि वेश्यागमन का कैसा भयंकर परिणाम होता है। अब वह एक पल भर के लिए वहाँ न ठहरा और अपनी दशा सुधारने की धुन में विदेश चलता बना। इस हालत में उसने अपना कलंकित मुख अपनी माता को दिखाना भी उचित न समझा।

बालको! विचार करो, चारुदत्त की एक समय क्या हालत थी और उसका घराना कैसा था। परन्तु जब से वह वेश्या के जाल में फँसा उसकी कैसी दशा हो गई। बड़े कष्ट भोगने पड़े; उसे पाखाने तक में गिरना पड़ा। देखो, वेश्या धन से ही प्रेम करती है; सच्चा प्रेम वह किसी से नहीं करती है।

सज्जन लोग इस प्राणघातिनी का संग दूर से ही त्याग करते हैं। यह विष की बेल है; आपत्ति की भूमि है; धन, धर्म, शरीर, यश सबको नाश करने वाली है। वेश्या की

संगति से नियम, व्रत, तप, शील, संयम आदि सब गुण नष्ट हो जाते हैं। देखो, चारुदत्त पहिले कितना धर्मात्मा, परोपकारी और दयालु था। इस पापिनी वेश्या की संगति से उसकी कैसी दुर्दशा हुई। यह जान कर हे ज्ञानियो! वेश्यासेवन जैसे कुव्यसन का दूर से ही त्याग करो।

प्रश्नावली

१ चारुदत्त किस का पुत्र था? उसका स्वभाव कैसा था?
२ चारुदत्त को वेश्या के घर जाने की कैसे आदत पड़ी?
३ वेश्या का प्रेम किस वस्तु से अधिक होता है?
४ वेश्या-गमन से चारुदत्त की क्या दुर्गति हुई?
५ वेश्या-संगति से क्या क्या हानियां होती हैं?
६ चारुदत्त की कथा से तुमको क्या शिक्षा मिलती है? अपने शब्दों में बताओ।

पाठ–२२

शिकार से हानि



कल्याणकटक नगर में एक भैरव नाम का शिकारी रहता था। वह प्रतिदिन शिकार के लिये जंगल में जाया करता था। जिस दिन उसे शिकार मिल जाता बड़ा खुश होता, न मिलता तो दुखी होता। एक दिन शिकार की खोज करते करते वह विन्ध्याचल के वनों में जा पहुँचा। वहाँ उसने कुछ दूर हिरणों के झुण्ड को चरते हुए देखा। वह अपना धनुष खींच कर दबे पाँव उनकी ओर चला। जब पास पहुँचा तो उसने एक हिरण पर तीर चलाया। तीर लगते ही बेचारा हिरण पृथ्वी पर गिर पड़ा।

भैरव इस मरे हुए हिरण को ले कर अपने घर को लौट रहा था। राह में उसने एक भयानक सूअर को देखा। सूअर को देखते ही उसके मन में विचार आया कि यदि इस सूअर का भी शिकार कर लिया जाय तो अच्छा हो। उसने हिरण को पृथ्वी पर रख कर सूअर पर बाण चलाया। दैवयोग से उसका बाण चूक गया। इतने में सूअर क्रुद्ध हो कर उस शिकारी पर झपटा और बादलसी गर्जना कर उसकी कमर में ऐसी टक्कर मारी कि वह कटे पेड़ के समान धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़ा, और आर्त्तध्यान से मर कर दुर्गति को गया। सच कहा है—

"जो गल काटे और का, अपना रहे कटाय।"

देखो शिकारी ने रसना इन्द्रिय की लोलुपता से निरपराध,

दीन हिरण को मारा। उससे बहुत बड़ा पाप कमाया जो उसी समय उदय में आ कर उसके प्राणों का घातक बना।

बालको! शिकार खेलने वालों का हृदय बड़ा ही कठोर और निर्दयी होता है। उनकी आँखों से सदा क्रोध की चिनगारियाँ छूटा करती हैं। उनकी बुद्धि क्रूर होती है, और सदा उनके दिल में पाप वासनायें जाग्रत रहती हैं। बहुत से लोग शिकार खेलने को बड़ी वीरता कहते हैं पर यह मिथ्या है। भला जिसमें निरपराध जीवों के प्राणों का घात किया जाय वह वीरता का काम कैसे हो सकता है। हम सब यह जानते हैं कि जरा-सा काँटा चुभ जाने से हमें कितना दुख होता है, तब जिसके प्राण लिये जाते हैं, उसे कितना कष्ट होता होगा।

इसलिये भाइयो! यदि तुम अपना और दूसरों का भला चाहते हो, यदि तुम्हारे दिलमें कुछ दया है, यदि तुम अपने जीवन को शान्तिमय बनाना चाहते हो, तो शिकार के भावों को अपने हृदय से निकाल कर फेंक दो।

प्रश्नावली

१ भैरव कौन था और उसका क्या कार्य था?

२ शिकार खेलना बहादुरी का कार्य है या नहीं? यदि नहीं तो क्यों नहीं है?

३ शिकार खेलने से क्या हानियाँ होती हैं?

४ कथा को सुनाते हुये बताओ कि भैरव को शिकार खेलने का क्या बुरा फल भोगना पड़ा?

५ इस कहानी से क्या शिक्षा मिलती है?

६ 'जो गल काटे और का अपना रहे कटाय' इसका अर्थ अपने शब्दों में समझाओ।

पाठ—२३

चोरी का बुरा फल



कौशाम्बी नगरी में राजा सिंहरथ राज्य करते थे। वहाँ एक चोर रहता था, जो बडा कपटी और ठग था। दिन में वह पंचाग्नि तप करता था और रात्रि में चोरी किया करता था। लोगों को उसका छल मालूम नहीं था। सब उसे तप के कारण बड़ा तपस्वी और महात्मा समझते थे।

जब नगर में बहुत सी चोरियाँ होने लगीं तो नगरवासियों में खलबली पड़ गई। सब इकट्ठे हो कर राज दरबार में पहुँचे, और हाथ जोड़ कर राजा से प्रार्थना करने लगे कि—'महाराज! हम बड़े दुखी हैं, नगर में प्रति दिन चोरी होने लगी हैं, और चोर का पता नहीं चलता।' इस पर राजा ने कोतवाल को बुलवाया और क्रुद्ध हो कर हुक्म दिया कि—'या तो सात दिन के भीतर चोर का पता लगाओ, नहीं तो कड़ा दण्ड दिया जायगा।'

कोतवाल ने तीन चार दिन तक बहुत प्रयत्न किया परन्तु चोर का कहीं पता नहीं लगा। कोतवाल बड़ी चिंता में था। इतने में वहाँ एक भूखा ब्राह्मण भिक्षा मांगने आया। कोतवाल ने कहा—'भाई! तुम्हें भीख की पड़ रही है, यहां प्राणों की चिंता हो रही है।' भिखारी ने कहा—'यह कैसे?' कोतवाल ने सारा हाल कह सुनाया।

भिखारी ने फिर कोतवाल से पूछा—'यहाँ इस नगर में

कोई तपस्वी रहता है?' उत्तर में कोतवाल ने उसी कपटी तपस्वी महात्मा को बताया।

भिखारी ने कहा—'वही निःसंदेह चोर है'। यद्यपि कोतवाल ने अपने विश्वास के अनुसार उसे बड़ा तपस्वी महात्मा सिद्ध किया, परन्तु भिखारी ने एक न मानी, और इस प्रकार के साधुओं द्वारा ठगे जाने की आप बीती कथायें सुना कर कोतवाल का भ्रम दूर किया। इस पर कोतवाल ने भिखारी को चोरी का पता लगाने के लिये नियत किया।

भिखारी ब्राह्मण अंधे का भेष बना कर तपस्वी के आश्रम में पहुंचा और चिल्लाने लगा कि—'मैं अन्धा हूं, रात हो गई है, कृपा कर मुझे यहाँ बसेरा दीजिये'। यद्यपि तापस के चेलों ने उसे वहां से भगाना चाहा पर वह वहीं गिर पड़ा। तापस ने यह समझ कर कि अन्धा है, हमारे काम में कुछ बाधा नहीं डाल सकता; उसे वहीं पड़ा रहने दिया। वह पड़ा पड़ा उनके सब कामों को देखता रहा।

आधी रात के समय तापस और उनके चेले नगर में चोरी करने गये और बहुत सा धन चुरा कर लाये। चोरी का सब माल उन्होंने आश्रम के एक अंध कूप में पटक दिया।

सवेरा होते ही तापस तो अपना पंचाग्नि तप तपने लगा, और वह अन्धा बना हुआ भिखारी लाठी खटखटाता हुआ

नगर की ओर चला। कोतवाल से जा कर आँख देखी रात की सारी घटना कह सुनाई। कोतवाल ने तुरन्त जा कर आश्रम को घेर लिया और तलाशी में चोरी का सब माल पा लिया। तापस और उसके चेलों को हथकड़ी लगा कर राजदरबार में हाज़िर किया गया।

राजा ने जाँच-पड़ताल के बाद अपराधियों को कारागार का कड़ा दंड दिया। तापस कारागार में आर्तध्यान से मर दुर्गति को गया। नगरवासियों को बुला कर राजा ने उनका चोरी गया हुआ माल सब वापिस कर दिया और भिखारी ब्राह्मण को बड़ा इनाम दिया।

बालको! देखो चोरी से तापस की कैसी दुर्दशा हुई! सारे नगर में उसकी निन्दा होने लगी और राजा ने उसे कड़ा दंड दिया। बुरी मौत मर कर खोटी गति में गया।

चोरी से बढ़ कर कोई पाप नहीं है। चोर को कोई अपने पास नहीं फटकने देता है। चोर का विश्वास जाता रहता है। चोरी का माल ठहरता नहीं, व्यर्थ ही नष्ट हो जाता है। चोर के सब गुण नष्ट हो जाते हैं। चोर को हर समय चिंता और भय बने रहते हैं। अनेक शारीरिक और मानसिक कष्ट उठाने पड़ते हैं। इसलिये भूल कर भी चोरी कि बुरी आदत न डालो।

प्रश्नावली

१ तपस्वी कौन था और उसका क्या कार्य था? क्या वह एक सच्चा महात्मा था?

२ राजा ने कोतवाल को क्या हुक्म दिया? और क्यों दिया? यह भी लिखो।

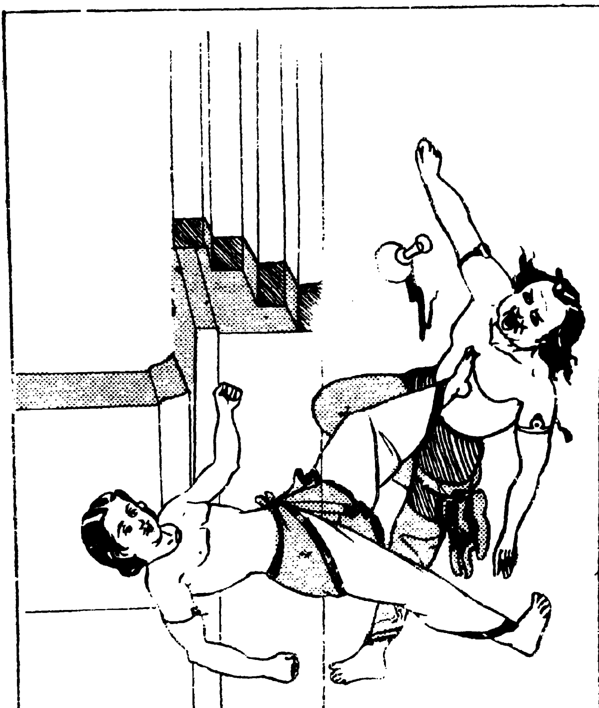
३ कोतवाल ने चोर का पता कैसा लगाया?

४ तपस्वी तथा उसके चेलों को चोरी करने का क्या फल मिला?

५ इस कहानी के पढ़नेसे क्या शिक्षा मिलती है?

पाठ – २४

परस्त्री-सेवन का बुरा फल



जुए में अपना सब राज पाट हार जाने के बाद दृढ़प्रतिज्ञ

पांडव द्रौपदी सहित धीरे धीरे नगर से बाहर निकले। बहुत दिनों तक अनेक बन, देश, नगर, ग्राम आदि में घूमते घूमते विराट नगर में पहुँचे। वहाँ के राजा का नाम भी विराट था। ये लोग नाना भेष बना कर राजा के पास गये। युधिष्ठिर महाराज भाट बने, भीम रसोइया बन कर गये, और अर्जुन ने कंचुकी का वेष रक्खा। सहदेव ज्योतिषी हो कर गये और नकुल साईम बने। सती द्रौपदी मालिन के वेष में गई। राजा इनसे बहुत प्रसन्न हुआ और जो जिस वेष में था उसे उसी कार्य में नियुक्त कर दिया। इस प्रकार सब राजा के सेवक बन कर रहने लगे।

राजा विराट के एक सुन्दर और गुणवती स्त्री थी। इसका भाई अर्थात् महाराज का साला, कीचक एक दिन अपनी बहिन से मिलने आया। उसने रणवास में मालिन के वेष में द्रौपदी को देखा। देखते ही यह उसके ऊपर मोहित हो गया और प्रति दिन द्रौपदी से अपनी पाप वासना प्रगट करने लगा।

एक दिन किसी एक शून्य मकान में कीचक ने द्रौपदी का हाथ पकड लिया। परन्तु उस वीर नारी ने अपने बल और धैर्य से उस समय उस पापी से छुटकारा पा लिया। द्रौपदी रोती हुई युधिष्ठिर के पास आई और यह सब वृत्तान्त कह सुनाया। सुनते ही युधिष्ठिर क्रोध से लाल हो गये।

उन्होंने कहा-जहाँ स्वयं राजा इतना दुराचारी हो, वहाँ प्रजा के दुराचार का क्या ठिकाना ? विद्वानों ने ठीक कहा है-

"जैसा राजा होता है वैसी ही प्रजा हो जाती है"-यह कह कर युधिष्ठिर ने द्रौपदी का ढाँढस बँधाया, और कहा-'सुशीले! तुम बड़ी वीर नारी हो, जो तुमने अपने शील की स्वयं रक्षा की। भय न करो; संसार में स्त्रियों की शोभा शील से ही होती है।'

इस समय भीम भी द्रौपदी की दुखभरी बातें सुन रहा था। वह द्रौपदी के इस तिरस्कार को न सह सका। उसने द्रौपदी से कहा-'तुम भय मत करो, सब अच्छा होगा। देखो, नगर से बाहर एक नाट्यशाला है, किसी तरह उस पापी को धोखा दे कर वहाँ बुला लो। उसके, कर्मों का फल मैं उसे वहीं चखाऊँगा।'

भीम की आज्ञानुसार दूसरे दिन द्रौपदी ने कीचक से कहा-'जैसे तुम मुझे चाहते हो, वैसे मैं भी तुम्हें चाहती हूँ। आज ही रात को हमारा तुम्हारा समागम नगर के बाहर नाट्यशाला में होगा।' द्रौपदी के यह वचन सुन कर कीचक बहुत प्रसन्न हुआ, और नाना प्रकार की शृङ्गार सामग्री ले कर नाट्यशाला में गया।

वहाँ भीम पहिले से ही द्रौपदी के रूप में छिप कर बैठा

था । कामान्ध कीचक हिताहित की बात न जान कर द्रौपदी के प्रेम से अकेला ही नाट्यशाला में घुस गया । वह झट आगे बढ़ा और द्रौपदी-वेषी भीम का हाथ पकड़ा । परन्तु हाथ की कठोरता से उसे जान पड़ा कि वह द्रौपदी नहीं है किन्तु कोई छल है । यह सोच कर उसने अपने हाथ छुड़ाने का यत्न किया, पर न छुड़ा सका । फिर क्या था दोनों में परस्पर घोर युद्ध होने लगा ।

बलवान भीम ने हाथ का एक ऐसा प्रहार किया कि कीचक धड़ाम से पृथ्वी पर गिर गया और उसके शरीर की हड्डियां चूर चूर हो गईं । उसका साँस रुक गया और एक शब्द बोलना भी उसे कठिन हो गया । उसकी छाती पर पाँव दे कर भीम ने कहा—'दुष्ट, परस्त्रीरत, नीच! देख यह सब परस्त्री-लंपटता का फल है ।' यह कह कर उसकी छाती में एक ऐसी जोर की लात जमाई कि जिससे उसका एक क्षण भर में ही काम तमाम हो गया ।

देखो लड़को! कीचक को परस्त्रीरत होने का कैसा बुरा फल मिला! उसकी कीर्ति नष्ट हो गई और कुल में कलंक लगा । अन्त में भीम के हाथ से उसकी मृत्यु हुई । अतः परस्त्री-सेवन से दोनों लोक बिगड़ते हैं । हजारों वर्ष का उज्ज्वल यश एक क्षण मात्र में नष्ट हो जाता है । परस्त्री-सेवन करने वाले को इस लोक में धनहानि, शारीरिक कष्ट और

परलोक में नरकादि कुगतियों के दुख भोगने पड़ते हैं। जो परस्त्री का सेवन करते हैं वे मनुष्य नहीं, नीच हैं।

इसलिये हे बुद्धिमानों, परस्त्री की संगति से अपनी रक्षा करो।

प्रश्नावली

१ द्रौपदी कौन थी ? द्रौपदी और पाण्डव विराट राजा के यहाँ गुप्त वेष में क्यों रहते थे ?

२ कीचक कौन था ? उसने द्रौपदी के साथ कैसा व्यवहार किया ?

३ कीचक की मृत्यु किस प्रकार हुई ? तुम्हारे विचार में भीम ने कीचक को धोखे से मार कर अच्छा किया या बुरा ?

४ परस्त्री को बुरी दृष्टि से देखने के कारण कीचक को क्या बुरा फल उठाना पड़ा ?

पाठ – २५

सप्त व्यसन

बालको, व्यसन बुरी आदत को कहते हैं। यह पीछे लग जाने पर बड़ी कठिनतासे छूटता है। व्यसन आपत्ति को भी कहते हैं। इनके कारण इस लोकमें दुःख और अपयश तथा परलोक में दुर्गति और निन्दा होती है। संसार में नरक व पशु गति के तथा दुखी, दारिद्री मनुष्यगति के सर्व संकटों के मूल कारण ये व्यसन ही हैं। जो मानव इनसे बच कर

रहते हैं वे अपने जीवन को सफल करते हैं। वे सदा सुखी रहते हैं। इन सातों व्यसनों की कथायें तुम पढ़ चुके हो। इन सातों व्यसनों से अपने को हमेशां बचाते रहो। नीचे लिखे दोहे को कण्ठस्थ कर लो।

दोहा—जूआ खेलन मांस मद, वेश्या व्यसन शिकार।
चोरी पर रमनी रमन, सातों व्यसन निवार॥

प्रश्नावली

१ व्यसन किसे कहते हैं और कितने हैं? नाम बताओ?
२ मदिरापानका त्यागी और कौन कौन सी वस्तुएं नहीं सेवन करेगा?
३ दूसरों की रक्षा करने के लिये हिंसक पशुओं या जीवों को मारना अच्छा है या बुरा? कारण सहित बताओ।

पाठ २६

बारह भावना

(पं० भूधरदास कृत)

अनित्य भावना

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार॥ १॥

अशरण भावना

दलबल देवी देवता, मात पिता परवार।
मरती बिरियां जीव को, कोई न राखन हार॥ २॥

संसार भावना

दान बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहूं न सुख संसार में, सब जग देखों छान॥ ३॥

एकत्व भावना

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यों कबहू या जीव को, साथी सगा न कोय॥ ४॥

अन्यत्व भावना

जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।
घर संपत्ति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय॥ ५॥

अशुचि भावना

दिपै चाम चादर मढ़ी, हाड़ पींजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन गेह॥ ६॥

आश्रव भावना

सोरठा—मोह नींद के जोर, जगवासी घूमें सदा।
कर्म चोर चहुँ ओर, सरबस लूटें सुध नहीं॥ ७॥

संवर भावना

सत गुरु देय जगाय, मोह नींद जब उपशमें।
तब कुछ बनै उपाय, कर्म चोर आवत रुकै॥ ८॥
पंच महाव्रत संचरन, समिति पंच प्रकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरासार॥ ९॥

 जो लोग काम में जल्दी करते हैं पीछे पछताते हैं ।

लोक भावना

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान ।
तामें जीव अनादि तें, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥ १० ॥

बोधि दुर्लभ भावना

जाँचे सुरतरु देय सुख, चिंतत चिंतारैन ।
बिन जाचे बिन चिंतते, धर्म सकल सुखदैन ॥ ११ ॥

धर्म भावना

धन कन कंचन राज सुख, सब ही सुलभ कर जान ।
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान ॥ १२ ॥

प्रश्नावली

१ भावना किसे कहते हैं ? और ये कितनी होती हैं ? नाम बताओ ।
२ भावनाओं का चिन्तवन कौन करते हैं और क्यों करते हैं ?
३ अशरण भावना व अन्यत्व भावना में क्या भेद है ?
४ धर्म भावना व लोक भावना के छंद बताओ ।
५ आश्रव और संवर भावना से तुम क्या समझते हो ?
६ इस बारह भावना के बनाने वाले कौन थे ?

चौबीस तीर्थंकरों के नाम चिन्ह आदि

नं०	नाम	चिन्ह	जन्मनगरी	पिता	माता	निर्वाण भूमि
१	श्रीआदिनाथ	बैल	अयोध्या	नाभिराजा	मरुदेवी	कैलाशपर्वत
२	श्रीअजितनाथ	हाथी	अयोध्या	जितशत्रु	विजयसेना	सम्मेदशिखर
३	श्रीसंभवनाथ	घोड़ा	श्रावस्ती	जितारि	सुसेना	,,
४	श्रीअभिनंदननाथ	बंदर	अयोध्या	संवर	सिद्धार्था	,,
५	श्रीसुमतिनाथ	चकवा	,,	मेघप्रभ	मंगला	,,
६	श्रीपद्मप्रभु	लाल कमल	कौशांबी	धारण	सुसीमा	,,
७	श्रीसुपार्श्वनाथ	सांथिया	बनारस	प्रतिष्ठित	पृथ्वी	,,
८	श्रीचंद्रप्रभु	चंद्रमा	चंद्रपुरी	महासेन	सुलक्षणा	,,
९	श्रीपुष्पदन्त	मगर	काकन्दी	सुग्रीव	रमा	,,
१०	श्रीशीतलनाथ	श्रीवृक्ष	भद्दिलपुर	दृढ़रथ	सुनंदा	,,
११	श्रीश्रेयांसनाथ	गैंडा	सिंहपुरी	विमल	विमला	,,

नं०	नाम	चिन्ह	जन्मनगरी	पिता	माता	निर्वाण भूमि
१२	श्रीवासुपूज्य	भैंसा	चम्पापुरी	वसुपूज्य	विजया	चम्पापुरजी
१३	श्रीविमलनाथ	शूकर	कम्पिला	सुकृतवर्मा	श्यामा	सम्मेदशिखर
१४	श्रीअनन्तनाथ	सेही	अयोध्या	हरिषेण	सुरजा	,,
१५	श्रीधर्मनाथ	वज्र	रतनपुर	भानु	सुव्रता	,,
१६	श्रीशान्तिनाथ	मृग	हस्तिनापुर	विश्वसेन	ऐरा	,,
१७	श्रीकुन्थुनाथ	बकरा	,,	शूरराजा	श्रीमती	,,
१८	श्रीअरनाथ	मीन	,,	सुदर्शन	मित्रा	,,
१९	श्रीमल्लिनाथ	कलश	मिथिला	कुम्भ	प्रजावती	,,
२०	श्रीमुनिसुव्रत	कछवा	राजगृही	सुमंत्र	श्यामा	,,
२१	श्रीनमिनाथ	नीलकमल	मिथिला	विजयरथ	विपुला	,,
२२	श्रीनेमिनाथ	शंख	द्वारिका	समुद्रविजय	शिवा	गिरनार पर्वत
२३	श्रीपार्श्वनाथ	सर्प	बनारस	अश्वसेन	वामा	सम्मेद शिखर
२४	श्रीमहावीर	सिंह	पावापुरी	सिद्धार्थ	मिथिला	पावापुर

नोट—इन चौबीस तीर्थंकरों में से श्रीवासुपूज्यजी, श्रीमल्लिनाथजी, श्रीनेमिनाथजी, श्रीपार्श्वनाथजी और श्रीमहावीर भगवान् ये बालब्रह्मचारी हुए हैं।

प्रश्नावली

१ तीर्थंकर कितने होते हैं? तुम किसी प्रतिमा को देख कर किस प्रकार जानोगे कि यह प्रतिमा अमुक तीर्थंकर की है?

२ तीर्थंकर भगवान् के चिन्ह कौन नियत करता है? और कब करता है? बताओ तीर्थंकरों के चिन्ह नियत होने से क्या लाभ है?

३ निम्नलिखित तीर्थंकरों के क्या चिन्ह हैं:-
आदिनाथ, पद्मप्रभु, कुंथनाथ, शीतलनाथ, नमिनाथ और महावीर।

४ बताओ निम्नलिखित चिन्ह कौन से तीर्थंकरों की प्रतिमा पर पाये जाते हैं:-
भैंसा, सर्प, हरिण, सेही, घोड़ा, चन्द्रमा, सांथिया।

५ बालब्रह्मचारी से तुम क्या समझते हो? कौन २ से तीर्थंकर बाल-ब्रह्मचारी हुए, उनके नाम बताओ।

६ चौबीस तीर्थंकरों के पृथक् पृथक् निर्वाण क्षेत्रों के नाम बताओ

पाठ—२८

धर्मवीर सम्राट् ऐल खारवेल

अयोध्या के इक्ष्वाकुवंशी राजाओं का राज कलिंग (उड़ीसा) तक हो गया था। महाराजा ऐल खारवेल इसी देश के भूषण थे।

"होनहार बिरवान के, होत चीकने पात।"

वाली कहावत के अनुसार उनके मुख पर बचपन ही से एक अपूर्व तेज झलकता था। उनका बहुत सुन्दर और दृढ

शरीर मन को मोह लेता था। वे बड़े महावीर मालूम पड़ते थे। ऐल खारवेल थोड़े ही दिनों में धर्मशास्त्र, राजनीति, शस्त्रविद्या आदि सब कलाओं में पारंगत हो गये थे।

पढ़ते पढ़ते ऐल खारवेल यह सोचा करते थे कि—देखो, इस देश में चन्द्रगुप्त, अशोक, सम्प्रति आदि कैसे कैसे सम्राट् अहिंसा धर्म के प्रवर्तक थे और उनके शासन काल में जैन मुनि निर्बाध रूप से धर्म पालते हुए यत्र तत्र विचरते थे। पर आज उन्हीं के सिंहासन पर मौर्य सम्राट् का सेनापति पुष्यमित्र बैठ कर कैसे कैसे अनर्थ कर रहा है। बेचारे दीन, दुखी पशुओं को हिंसायज्ञ की वेदियों में झोंक रहा है, और इसे धर्म बता रहा है। इन दीन, निरपराध पशुओं ने किसी का क्या बिगाडा है, पर यह उनका हवन कर वैदिक यज्ञ बना रहा है। क्या यह ऐसा अन्याय और अधर्म होता ही रहेगा?

अभी खारवेल सतरह ही वर्ष के हो पाये थे कि इनके पिता का देहान्त हो गया। कलिंग का राजसिंहासन सूना हो गया। खारवेल बिना पचीस वर्ष के हुये उस पर नहीं बैठ सकते थे। अतः युवराज पद से देश की रक्षा करने लगे।

एक बार उन्हें मालूम हुआ कि उनके पड़ोसी कश्यप

क्षत्रियों को आततायी मूषिक लोग कष्ट पहुँचा रहे हैं। दलित-त्रसित प्राणियों की रक्षार्थ झटपट खारवेल ने उनपर चढ़ाई कर दी और विजय का झंडा फहराते हुये वह राजधानी में लौट आये।

खारवेल अभी लड़के ही थे, परन्तु उनका बल, पराक्रम, रणकौशल, नीति, चातुर्य, गंभीर अनुभव को प्रगट करता था। उन्होंने देशोद्धार के साथ साथ धर्म को उन्नत बनाने का प्रण कर लिया था। पुष्यमित्र पर खारवेल ने दो बार आक्रमण किया। दूसरी बार वह विजयी हुए। मगध में अब फिर हिंसक पशुयज्ञ होने कठिन हो गये। इस जीत में खारवेल बहुत सी वस्तुयें लाये उनमें कलिंग की एक प्राचीन मूर्ति भी लाये जो किसी समय नन्द राजा वहाँ से ले गये थे। वह मूर्त्ति "अग्र जिन" नाम से विख्यात थी और प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभ देव की थी। खारवेल ने एक सुन्दर भव्य मन्दिर बनवाया और उसमें उस मूर्ति को बड़े ठाठ बाट से विराजमान किया। अब वह राज पद पर आरूढ़ हो गये थे और कलिंग सम्राट् कहलाते थे।

उन्होंने पुष्यमित्र के अतिरिक्त दक्षिण भारत के सभी राजाओं को अपने आधीन किया। विदेशी यवनों का सरदार डिमीटेरियस उत्तर भारत पर अपना सिक्का जमा रहा

था, और मथुरा तक बढ़ गया था। खारवेल ने इस घटना की उपेक्षा नहीं की। किन्तु खारवेल के आने से पहिले ही वह मथुरा छोड सीमा प्रांत की ओर चला गया। सच मुच खारवेल के रण-कौशल को देख कर लोग चकित होते हैं, और उन्हें भारत का नैपोलियन बताते हैं।

जिस प्रकार खारवेल ने राजक्षेत्र में अपना नाम उज्वल किया उसी प्रकार अपने धार्मिक कार्यों द्वारा भी वे अपना नाम अमर कर गये हैं। उनके बनवाये हुये सुन्दर गुफा मन्दिर और जैन मूर्तियों के लिये आश्रम खंडगिरी, उदयगिरी पर्वत पर मौजूद हैं। इसी स्थान पर खारवेल का एक बड़ा भारी शिलालेख खुदा हुआ है, जिसके पढने से आज हमें इस धर्मवीर का नाम जानने को मिलता है।

खारवेल को बचपन से ही धर्म की लगन थी। राजा हो कर उसने उसे अमलीजामा पहना दिया, जैन धर्म की प्रभावना हुई। वह स्वयं कुमारी पर्वत पर जैन ऋषियों की संगति में रह कर धर्माचरण का अभ्यास करता था। वह बड़ा धीर वीर राजा था।

बालको! जब तुम भी बड़े हो जाओ और किसी ऊंचे पद पर पहुँचो तो अपने प्यारे धर्म को उन्नत करना न भूलना। धर्म को अपनाये रहोगे तो तुम्हारा नाम भी अमर

हो जायगा । तुम भी खारवेल की तरह दृढ़प्रतिज्ञ, जिनधर्म भक्त, निर्ग्रन्थ गुरुसेवी, धर्माचरणी बनना ।

प्रश्नावली

१ महाराजा ऐल खारवेल कौन से वंश में उत्पन्न हुए थे और ये पढ़ते समय क्या सोचा करते थे ?

२ युवराज पद से तुम क्या समझते हो ? ऐल खारवेल अपने पिता की मृत्यु होने पर सिंहासन पर क्यों नहीं बैठ सके ?

३ खारवेल को भारत का नैपोलियन क्यों कहते हैं ?

४ खारवेल ने राजा हो कर अपनी प्रजापालन के अतिरिक्त और क्या क्या बड़े कार्य किये ? खारवेल के जीवन से तुमने क्या सीखा ?

पाठ–२९

यमपाल चाडाल

काशी के राजा पाकशासन ने एक समय ढिंढोरा पिटवा दिया–'नन्दीश्वर पर्व में आठ दिन तक किसी जीव का वध न हो; इस राजाज्ञा का उल्लंघन करने वाला प्राणदंड का भागी होगा।' राजा के एक पुत्र था जिसका नाम तो धर्म था, पर वह था बड़ा अधर्मी। सप्त व्यसनों का सेवन करने वाला था। बड़ा मांसलोलुपी था। मांस खाये बिना उससे एक दिन भी न रहा जाता था। एक दिन राजाज्ञा के डर से वह बगीचे में गया और राजा के खास मेंढ़े को जो कि वहीं बँधा रहता था मार डाला।

दूसरे दिन जब राजा ने मेंढ़े को न देखा, और बहुत खोज करने पर भी पता न चला, तब राजा ने मेंढे का पता लगाने को बहुत से गुप्तचर नियत किये। एक गुप्तचर बाग़ में भी चला गया। बाग़ का माली रात को अपनी स्त्री से राजपुत्र द्वारा मेंढा मारे जाने की बात कह रहा था। गुप्तचर ने सुन लिया और राजा से जा कर कह दिया। राजा को बड़ा क्रोध आया। उसने कोतवाल को बुला कर आज्ञा दी कि राजपुत्र को ले जा कर शूली चढ़ा दो। एक तो इसने जीवहिंसा की है दूसरे राजाज्ञा भंग की है।

कोतवाल राजपुत्र धर्म को श्मशान भूमि में ले गया, और सिपाहियों को भेज कर यमदंड को बुलाया जो इसी काम के लिये नियत था। पर यमपाल ने एक दिन परम निर्ग्रन्थ जिन मुनि के पास नियम लिया था कि मैं चतुर्दशी को जीव बध नहीं करूँगा। आज चतुर्दशी का दिन था। सिपाहियों को आते देख कर वह घर में छिप गया और अपनी स्त्री से कह गया कि—'अगर कोई मुझे बुलाने आये तो उससे कह देना, यहाँ नहीं हैं, दूसरे गाँव गये हैं'।

सिपाहियों ने आ कर जब चांडाली से पूछा तब उसने कह दिया कि वह तो दूसरे गाँव गया है। सिपाहियों ने बड़े खेद के साथ कहा—'हाय! वह बड़ा अभागा है। उसका भाग खोटा है। आज ही राजपुत्र के मारने का मौका आया और आज ही चल दिया। अगर वह राजपुत्र को मारता तो उसके सब गहने कपड़े उसे मिलते'। गहने कपड़ों का नाम सुन कर यमपाल की स्त्री के मुँह में पानी भर आया। उसने अपने पति का हानि लाभ कुछ न सोच कर रोने का ढोंग बना कर—'हाय, वे आज ही गांव को चले गये।' मुँह से यह कह कर, हाथ से घर की ओर इशारा कर दिया और छिपे हुए स्वामी को बता दिया।

सिपाहियों ने भीतर जा कर यमपाल को घर से बाहर

निकाला। निकलते ही निर्भय हो कर उसने कहा—'आज चतुर्दशी का दिन है और मुझे आज अहिंसाव्रत है। मेरे प्राण भले ही चले जायें पर मैं आज जीवहिंसा नहीं करूँगा।' उसका यह उत्तर सुन कर सिपाही उसको राजा के पास ले गये।

राजा एक तो राजपुत्र पर पहले ही से गुस्से हो रहे थे। इस पर यमपाल को राजाज्ञा का उल्लंघन करने वाला और अभिमानी देख कर कोतवाल को राजा ने आज्ञा दी कि—'जाओ, इन दोनों को मगरमच्छ आदि क्रूर जीवों से भरे हुए तालाब में छोड़ दो।' कोतवाल ने ऐसा ही किया और दोनों को तालाब में डाल दिया।

तालाब में डालते ही पापी धर्म को तो जल के जीवों ने खा लिया। पर यमपाल अपने व्रत पर दृढ़ रहा था इससे उसके उच्च भावों और व्रत के प्रभाव से देवों ने उसकी रक्षा की। उन्होंने धर्मानुराग से तालाब में ही एक सिंहासन पर यमपाल चांडाल को बैठा दिया। उसका अभिषेक किया, और बहुत आदर किया। जब राजा प्रजा को यह हाल मालूम पड़ा तो उन्होंने भी यमपाल को वस्त्राभूषण दे कर सन्मानित किया।

बालको, यमपाल चांडाल का दृढ़ व्रत के प्रभाव से

देवों ने कैसा सन्मान किया । पूजा गुणों की होती है, जाति की नहीं । ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्यों को कभी जाति का अभिमान नहीं करना चाहिये ।

देखो, एक चांडाल भी व्रत के माहात्म्य से देवों तथा राजा द्वारा सन्मानित हुआ, तो और मनुष्य भी जो ऐसे व्रतों को धारण करते तथा पालते हैं क्यों पूजित नहीं होंगे ? अवश्य होंगे ।

प्रश्नावली

१ काशी का राजा कौन था और उसने किस बात का ढिंडोरा पिटवा दिया था ?

२ राजा की आज्ञा उल्लंघन करने वाला कौन था और उसके लिये राजा ने क्या दंड दिया ?

३ यमपाल कौन था ? उसने क्या व्रत ले रक्खा था ?

४ यमपाल की स्त्री ने कैसे और क्यों अपने छिपे हुए पति को बता दिया ?

५ राजा ने यमपाल के लिये क्या आज्ञा दी ? जाति का चांडाल होने पर भी यमपाल देवों द्वारा क्यों सन्मानित हुआ ?

६ इस कहानी को पढ़ कर तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?